CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1228

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

State Museum Library Lucknow
1228

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय
प्रो बी एन० पुरी
संग्रह
लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# दक्षिण-पूर्व एशिया में इन्द्र

प्राचीन भारतीय इतिहास और संस्कृति एवं पुरातत्त्व के
१९७३ के एम० ए० उत्तरार्द्ध की परीक्षा के
पाँचवें प्रश्न-पत्र के रूप में
प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय
7228
प्रो० बी० एन० पुरी संग्रह
लखनऊ

State Museum Library
7228
Lucknow

प्रस्तुतकर्त्री
शीला श्रीवास्तव

एनरोलमेंट नम्बर १०१४१५

रोल नम्बर ४६

Forwarded

पर्यवेक्षिका—

सुदर्शन देवी सिंहल

श्रीमती डॉ० सुदर्शना देवी सिंहल
प्रवक्ता,
प्राचीन भारतीय इतिहास, और संस्कृति एवं पुरातत्त्व,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी।

विषय स्वीकृत—

डॉ० लल्लन जी गोपाल
अध्यापक एवं अध्यक्ष,
प्राचीन भारतीय इतिहास और संस्कृति एवं पुरातत्त्व,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी।

ANCIENT INDIAN HISTORY, CULTURE & ARCHAEOLOGY
Hindu University

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# भूमिका

इन्द्र भारतवर्ष का महत्वपूर्ण देवता है । उसे देवराज माना जाता है । उसके सम्बन्ध में जानने के प्रमुख साहित्यिक स्रोत वैदिक, पौराणिक एवं परवर्ती साहित्य हैं ।

वैदिक काल से ही इन्द्र का अपना विशिष्ट स्थान रहा है । यह युद्ध एवं वृष्टि का देवता है । इसका सम्बन्ध अन्य वैदिक देवताओं के साथ भी है । कभी-कभी इसका एवं अन्य देवों का साथ-साथ आह्वान किया गया है । इन्द्र वैदिक आर्यों का जातीय देवता था । यही कारण है कि ऋग्वेद में अन्य देवताओं की अपेक्षा इन्द्र को अधिक महत्त्व प्रदान किया गया है ।

उत्तर वैदिक काल में भी वह देवताओं का प्रतिनिधित्व करता है ।

पौराणिक काल में इन्द्र से सम्बद्ध अनेक आख्यान मिलते हैं जिनमें पार्थिव राजा के सदृश उसके चरित्र के उत्थान-पतन दृष्टिगत होते हैं तथा अन्य देवताओं से उसके सम्बन्ध तथा पार्थिव जनों से उसके संघर्ष, विरोध, सफलता एवं असफलता का पूर्ण चित्रण मिलता है । लोकपाल अथवा दिक्पाल के रूप में वह पूर्व दिशा का संरक्षक देव माना जाता है ।

परवर्ती काल में भी इन्द्र अपनी महत्ता बनाये रखता है । अनेक राजाओं ने उससे अपनी समता स्थापित की है । इन्द्र ही प्रथम देवता है जो बौद्ध और जैन धर्मों में आत्मसात् कर लिया गया । कला में भी इन्द्र को स्थान दिया गया है । इसप्रकार यदि भारतीय परिवेश में इन्द्र के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



सम्बन्ध में लिखा जाय तो एक पुस्तक ही लिखी जा सकती है, किन्तु मैंने यहाँ कुछ प्रमुख प्रसंग ही लिये हैं।

भारतवर्ष का एशिया के अन्य देशों से शताब्दियों से सम्पर्क रहा है। इस सम्पर्क के साथ-साथ उन देशों में भारतीय संस्कृति का प्रचार एवं प्रसार भी हुआ। अत: जब हम भारत के आसपास के देशों अथवा सुदूरपूर्व के इतिहास का अध्ययन करते हैं तो यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि ये सभी देश भारतीय संस्कृति से अनुप्राणित हैं। इन देशों में उत्तर में मध्यएशिया, तिब्बत एवं चीन तथा दक्षिण-पूर्व में बर्मा, कम्बुज, थाईदेश, वियतनाम (प्राचीन नाम चम्पा) और इण्डोनेशिया (द्वीपान्तर) प्रमुख हैं। इन देशों से प्राप्त पुरातात्त्विक अवशेषों और लेखों में सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक सभी क्षेत्रों में भारतीय संस्कृति ओत-प्रोत है। भारत के इन पड़ोसी देशों में भारतीय संस्कृति के प्रसार में धर्म, कला और संस्कृत भाषा[1] का विशेष स्थान रहा है। शैव, वैष्णव एवं बौद्ध, तीनों धर्म वहाँ फले फूले हैं। इनके अतिरिक्त अग्नि, आदित्य, इन्द्र, कुबेर, गणेश[2], चन्द्र, ब्रह्मा, यम आदि ब्राह्मण देवताओं तथा इन्द्राणी, गंगा, वागीश्वरी, सरस्वती[3] आदि देवियों की भी पूजा एवं स्तोत्र[4] प्रचलित थे। भारतवर्ष के समान सुदूरपूर्व में भी इन्द्र का धार्मिक सम्प्रदाय नहीं बना। इन्द्र को विशिष्ट स्थान अपने शौर्य-वीर्य के कारण मिला।

---

१- द्वीपान्तर पर विद्वान् प्रो० जे० गोण्डा की पुस्तक 'संस्कृत इन् इण्डोनेशिया' द्रष्टव्य है।

२- गेटी, ए० : गणेश और चन्द्र, लोकेश: 'गणेश इन् जापान' इन् स्टडीज इन् इण्डो-एशियन आर्ट एण्ड कल्चर, भाग १, नई दिल्ली, १९७२।

३- चन्द्र, लोकेश,: 'सरस्वती इन् जापानीज़ आर्ट' इन् स्टडीज इन् इण्डो-एशियन आर्ट एण्ड कल्चर, भाग २, नई दिल्ली, १९७३।

४- सिल्वां लेवी : संस्कृत टेक्स्ट्स फ्राम् बालि (बालिद्वीपग्रन्था) तथा द्रष्टव्य गॉड्रियन्, टी० और होइकास, सी : स्तुति एण्ड स्तव।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



कम्बुज देश में भारतीय संस्कृति का प्रवेश प्रथम शती के लगभग विद्वानों ने माना है। इन्द्र वहाँ का प्रिय देवता था। वहाँ के अनेक शक्तिशाली राजाओं ने अपना नामकरण इन्द्र के नाम पर किया एवं अपनी तुलना इन्द्र से की है तथा अनेक राजाओं ने इन्द्र को अपना मित्र समझा, स्वयं को द्वितीय इन्द्र माना तथा शिलालेख- लेखकों ने कभी-कभी राजा को इन्द्र से बढ़कर भी बताया है। और महिषी की तुलना इन्द्राणी से की है। वहाँ के राजाओं को अपने राज्य की सुरक्षा के लिए युद्ध करना पड़ता था। इसी कारण उन्होंने अपनी शक्ति, पराक्रम एवं वीरता के प्रदर्शन के लिए अन्य देवताओं की अपेक्षा इन्द्र से अपनी तद्रूपता स्थापित करना अधिक उचित समझा। इसके अतिरिक्त वहाँ के राजाओं ने इन्द्र के नाम पर तड़ागों, नगरों एवं मन्दिरों की भी स्थापना की। इसका उल्लेख हमें वहाँ के राजाओं के अभिलेखों में मिलता है। डॉ० मजुमदार ने वहाँ के अधिकांश प्रकाशित (बी०ई०एफ०इ०ओ० पत्रिका में) अभिलेखों को अपनी 'इंस्क्रिप्शन्स ऑव् कम्बुज' नामक पुस्तक में एकत्र किया है। अत: इस कार्य के लिए मैंने इस पुस्तक का विशेष सहारा लिया है। इन्द्र कोई साम्प्रदायिक देवता न था। अत: वहाँ की कला में इसको बहुत कम स्थान दिया गया। अधिकांशत: द्वार के मेहराबों पर इसका चित्रण हुआ।

चम्पा एवं कम्बुज की संस्कृति में समानता पायी जाती है। चम्पा के लिए मैंने वहाँ के संस्कृत अभिलेखों का ही विशेष सहारा लिया। वहाँ की कला एवं अन्य साहित्य में इन्द्र का क्या स्थान था, इसकी विशेष जानकारी चम्पा की कला पर उपलब्ध पुस्तकों से न हो सकी।

थन्यमिन् बर्मी धर्म का इन्द्र है। लोकविश्वास में यह कृषि का देवता है। भारतवर्ष में इन्द्र वृष्टि का देव माना जाता है और वृष्टि का विशेष सम्बन्ध कृषि से है। बर्मा में कृषि-उत्सव अथवा नववर्षोत्सव का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



विशेष सम्बन्ध शक से स्वाभाविक ही है। बर्मा का प्रमुख धर्म बौद्ध धर्म है। पुस्तकाभाव के कारण यहाँ के अन्य साहित्य, धर्म एवं संस्कृति में इन्द्र के सम्बन्ध में सामग्री नहीं मिल सकी है। डॉ० नीहाररंजन रे ने अपनी पुस्तक 'ब्राह्मनिकल गॉड्स् इन् बर्मा' में वहाँ के ब्राह्मण देवताओं का उल्लेख किया है, किन्तु इस पुस्तक में भी इन्द्र के सम्बन्ध में कोई विशेष उपयोगी सामग्री नहीं है।

थाई देश १३ वीं शती में संघटित राष्ट्र है। यह बौद्ध धर्मानुयायी है। यहाँ के विहार जातक-दृश्यों से अलंकृत हैं। जातक-कथाओं एवं दृश्यों में इन्द्र का उल्लेख मिलता है। थाई कला पर उपलब्ध महत्वपूर्ण पुस्तक 'ए कॉन्साइज हिस्ट्री ऑव् बुद्धिस्ट आर्ट इन् स्याम' में इन्द्र पर सामग्री नहीं मिली। थाई जातकों में इन्द्र सम्बन्धी उद्धरण एवं चित्र पुस्तकों में संगृहीत हैं।

द्वीपान्तर में भी इन्द्र को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। बालि[१] के परवर्ती स्तोत्र-साहित्य में इन्द्र का स्तवन प्राप्त होता है जिससे उसकी महत्ता सिद्ध होती है। द्वीपान्तर के कवि काव्य 'इन्द्रविजय ककविन्' में भी, जो अभी तक हस्तलेख के रूप में ही है, इन्द्र सम्बन्धी कथा मिलती है। लाराजोङ्ग्रङ्ग मन्दिर के एक फलक पर कुछ आकृतियाँ हैं जिनकी पहचान इन्द्रादि चार लोकपालों से की गयी है। किन्तु यह चित्र मुझे न मिल सका, अत: साहित्यिक साक्ष्यों से ही सन्तोष करना पड़ा।

लाओस् का अधिकांश साहित्य अप्रकाशित है। जो थोड़ा बहुत साहित्य फ्रेंच में प्रकाशित है, वह इस विश्वविद्यालय में उपलब्ध न हुआ।

---

१- नागरीप्रचारिणी सभा से प्रकाशित 'हिंदी विश्वकोश' में 'बाली' शब्द लिखा है। द्वीपान्तर में 'बाली' को 'बलि' लिखते हैं, किन्तु इसका उच्चारण 'बालि' करते हैं। एतदर्थ मैंने 'बाली' के स्थान पर 'बालि' शब्द का ही प्रयोग किया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



इस कारण मैं लाओस् में इन्द्र के सम्बन्ध में कुछ विचार और विवेचन नहीं कर सकी ।

यह विषय रोचक है और भारतीय इतिहास एवं वैभव के स्वर्णिम पन्नों को देखने और जानने की उत्कट इच्छा प्रत्येक भारतीय में होना स्वाभाविक है । इस विषय पर भारतीय दृष्टिकोण से कार्य करने की अपनी महती इच्छा के कारण ही मैंने शोध-प्रबन्ध के लिए यह विषय चुना ।

इस हेतु मैं विभागाध्यक्ष महोदय के प्रति नम्र आभार प्रकट करती हूँ, जिन्होंने मुझे इस कार्य के लिए अनुमति, प्रोत्साहन और प्रत्येक प्रकार का सहयोग प्रदान किया ।

श्रद्धेय आर०एस० मिश्र जी ने इसके लिए अपना अमूल्य समय देकर एवं मुझे परमोपयोगी परामर्श देकर अनुगृहीत किया है । एतदर्थ मैं उनके प्रति हार्दिक आभार प्रकट करती हूँ ।

मैं आदरणीया श्रीमती डॉ० सुदर्शना देवी सिंहल जी के प्रति विशेष कृतज्ञ हूँ, जिनकी प्रेरणा, आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन से मुझे इस कार्य में सफलता प्राप्त हो सकी ।

मैं उन सभी गुरुजनों के प्रति आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे इसके लिए सहयोग एवं प्रोत्साहन दिया ।

शीला श्रीवास्तव

०००००००००००० (शीला श्रीवास्तव)

३०-११-७३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# विषय - सूची


| | पृष्ठ संख्या |
| --- | --- |
| **प्रथम अध्याय:** | |
| इन्द्र : भारतीय परिवेश में --- | १ |
| **द्वितीय अध्याय:** | |
| कम्बुज देश के संस्कृत अभिलेखों और कला में इन्द्र | ४३ |
| **तृतीय अध्याय:** | |
| चम्पा के राजाओं की इन्द्र से तुलना | ७१ |
| **चतुर्थ अध्याय:** | |
| बर्मा की लोक परम्पराओं में इन्द्र | ७६ |
| **पंचम अध्याय:** | |
| थाइ जातकों में इन्द्र | ८५ |
| **षष्ठ अध्याय:** | |
| द्वीपान्तर के कवि काव्यों, दार्शनिक साहित्य एवं बालि के स्तोत्र साहित्य में इन्द्र | ८७ |
| **सप्तम अध्याय:** | |
| जापान, चीन और तिब्बत में इन्द्र | ११४ |
| **पुस्तक सूची:** | १२४ |

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# प्रथम अध्याय

## इन्द्र : भारतीय परिवेश में

भारतीय देवमण्डल में इन्द्र का महत्वपूर्ण स्थान है। वैदिक काल से ही वह देवताओं का प्रतिनिधित्व करता है और आज तक वह 'देवराज' के रूप में अधिष्ठित है, किन्तु इसका कोई अपना सम्प्रदाय नहीं है।

'इन्द्र' शब्द का मूल अनिश्चित है। भारत-ईरानी एकता के युग में इन्द्र का अस्तित्व इन्द्र नामक दानव वेरेथ्रघ्न नामक विजयदेव की सत्ता से सम्भव माना गया था, जो स्पष्टतया वृत्रहन् के तुल्य था। इसकी पुष्टि तेल-अल-अमर्ना के लेख से होती है जिसमें मितान्नि देवों की सूची में मित्र, वरुण और नासत्या के साथ इन्द्र का नाम भी है। अत: आख्यान का यह समानान्तर्य सिद्ध करता है कि इन्द्र की कल्पना का मूल भारोपीय[1] है।

### वैदिक साहित्य में इन्द्र

इन्द्र वैदिक साहित्य का सर्वोच्च देवता है। ऋग्वेद के चतुर्थांश में इसका गुणगान किया गया है। सूर्य, अग्नि, वरुण, वायु, सोम, विष्णु, रुद्र, मरुत्, पूषण एवं बृहस्पति आदि अन्य देवताओं की स्तुति के साथ उन सूक्तों की संख्या और भी अधिक हो जाती है।

---

१- कीथ, ए०बी० : वैदिक धर्म एवं दर्शन (प्रथम भाग), अनुवादक डा० सूर्यकान्त, पृष्ठ १६५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



१०१

**उत्पत्ति**

वैदिक साहित्य में इन्द्र की उत्पत्ति सम्बन्धी अनेक मत मिलते हैं। ऋग्वेद के दो सम्पूर्ण सूक्त[1] उसके जन्म के विषय से सम्बद्ध हैं। एक स्थान पर कहा गया है कि वह अस्वाभाविक ढंग से अपने माता के पार्श्व से उत्पन्न हुआ।[2] ऐसा भी कहा जाता है कि दैत्यों के विनाश के लिए देवों ने इनकी उत्पत्ति की थी।[3] पुरुषसूक्त[4] में उसके विश्वरूप के मुख से उत्पन्न होने की बात कही गयी है। शतपथब्राह्मण[5] के अनुसार प्रजापति ने इन्द्र, अग्नि, सोम और परमेष्ठिन् की सृष्टि की थी। तैत्तिरीयब्राह्मण[6] में उल्लिखित है कि देवों के बाद प्रजापति ने इन्द्र की रचना की। एक मत के अनुसार आत्मस्थानीय प्राणों को इन्द्र कहा जाता है, अर्थात् वे इन्द्र देवता के आविर्भावक हैं।[7] इन्द्र का जन्म एक स्वर्णिम[8] एवं विचार से भी अधिक वेगवान रथ पर हुआ। इसी से उसे 'रथेष्ठा' उपाधि दी गयी।

---

१- सद्यो ह जातो वृषभ: कनीन: प्रभर्तुमावदन्धस: सुतस्य।
साधो: पिब प्रतिकामं यथा ते रसाशिर: प्रथमं सोम्यस्य ।। ऋग्वेद ३।४८।१।
-- अयं पन्था अनुवित्त: पुराणो यतो देवा उदजायन्त विश्वे।
अतश्चिदा जनिषीष्ट प्रवृद्धो मा मातरममुया पत्तवे क: ।। ऋ०४।१८।१।

२- नाहमतो निरया दुर्गहैतत् तिरश्चता पार्श्वान्निर्गमाणि। ऋ०४।१८।२।

३- घ्नं वृत्राणां जनयन्त देवा:। ऋ० ३।४९।१।

४- मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत। पु० सू० १०।९०।१३

५- ता वा एता: प्रजापतेरधि देवता
असृज्यन्ताग्निरिन्द्र: सोम: परमेष्ठी प्राजापत्य:। शत०ब्रा० ११।१।६।१४।

६- प्रजापतिरिन्द्रमसृजतानुजावरं देवानाम्। तै०ब्रा० २।२।१०।१।

७- चतुर्वेदी, गिरिधर शर्मा : वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, पृ० ११४।

८- ऋग्वेद, ६।२९।२।, १०।११२।२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



ऋग्वेद में कहा गया है कि जैसे बादल में बिजली उत्पन्न होते ही आकाशमण्डल प्रदीप्त हो उठता है, उसी प्रकार उसके उत्पन्न होते ही अखिल विश्व उसके तेज के सम्मुख धूमिल हो गया [१]। उत्पन्न होते ही उसमें विशेष गुण, यथा अजेय, अचलादि दिखायी पड़ने लगे; पर्वत, आकाश और पृथ्वी भय से प्रकम्पित हो उठे [२]। सभी देवता भयभीत हो गये।

ऋग्वेद से ज्ञात होता है कि जन्म लेते ही इन्द्र ने वामदेव ऋषि को युद्ध के लिए ललकारा। जब इन्द्र ने ऋषि के प्रति बल का प्रयोग किया तब वामदेव ने इन्द्र से दस दिन और रात्रियों तक युद्ध करते हुए शक्ति द्वारा उसे पराजित किया [३]।

परिवार— वैदिक साहित्य में इन्द्र के माता-पिता के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के उल्लेख मिलते हैं। एक स्थान पर इसकी माता को गाय अथवा गृष्टि और इसे बछड़े के रूप में बताया गया है। इसका नाम "गार्ष्टेय" इसी कथा की ओर संकेत करता है [४]। "निष्टिग्री" को भी इन्द्र की माता कहा गया है [५]। निष्टिग्री सम्भवतः अदिति है [६]। दूसरे स्थान पर कहा गया है कि अग्नि का पिता ही इसका पिता है। इसे धौस का पुत्र [७] भी कहा गया है।

---

१- ऋग्वेद, ~~४।१८।५~~, ऋ० ३।४८।४ ।

२- अस्येदु भिया गिरयश्च दृळहा द्यावा च भूमा जनुषस्तुजेते । ऋ०१।६१।१४

३- (अनु०) राय, रामकुमार : शौनकीय बृहद्देवता, पृ० १४४-४५।

४- "सं गार्ष्टेयो वृषभो गोभिरानट् । ऋ० १०।१११।२।

५- "निष्टिग्र्यः पुत्रमा च्यावयोतय इन्द्रं सबाध इह सोमपीतये । ऋ० १०।१०१।१२।

६- यह विचार सायणाचार्य का है।

७- "सुवीरस्ते जनिता मन्यत द्यौरिन्द्रस्य कर्ता स्वपस्तमो भूत् । ऋ० ४।१७।४ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



। ० ।

वेद के अनेक मन्त्रों में जहां देवियों के नामों का उल्लेख है, वहाँ इन्द्राणी का नाम भी आता है। ऋग्वेद के एक सूक्त में इन्द्र की पत्नी को 'इन्द्राणी'[1] कहा गया है। शतपथब्राह्मण[2] के अनुसार इन्द्र की महिषी 'इन्द्राणी' है। ऐतरेयब्राह्मण[3] में 'प्रासहा' और 'सेना' का नाम इन्द्र की पत्नियों के रूप में मिलता है। ऋग्वेद[4] में इसको कभी-कभी 'शची' भी कहा गया है।

<u>इन्द्र का आयुध</u> इन्द्र का प्रमुख आयुध वज्र है इससम्बन्ध में अनेक मत मिलते हैं। मात्र बिजली की कड़क ही उसका वज्र था। यह भी कहा जाता है कि त्वष्टा ने उसे युद्ध में विजयी बनाने के लिए वज्र बना कर दिया था।[4] साथ ही यह भी गाथा मिलती है कि उशना ने इसे बनाया था।[5] ऐतरेयब्राह्मण[6] से ज्ञात होता है कि यह वज्र इन्द्र को देवताओं से प्राप्त हुआ था। इन्द्र के हाथ में स्थित वज्र की तुलना आकाश में स्थित सूर्य से भी की गयी है।

वज्र का स्थान समुद्र था तथा सूर्य के नीचे भी इसका निवास था।[7] यह चतुष्कोण, शतकोण, शतपर्व, [redacted] निशित और चाकू से भी अधिक तेज होता था। इसका वर्ण हिरण्यमय एवं हरित् बताया गया है।[8] इसके कारण ही इन्द्र को वज्रहस्त, वज्रवत् एवं वज्रदक्षिण कहा गया।

---

१- इन्द्राणीमासु नारिषु सुभगामहमश्रवम्। ऋ० १०।८६।११
२- इन्द्राणी ह वाइन्द्रस्य प्रिया पत्नी। शत० ब्रा० १४।२।१।८।
३- सेना वा इन्द्रस्य प्रिया जाया वावाता प्रासहा नाम। ऐत०ब्रा० ३।।२२।७।
४- शचीपते शचीनां ........ विवदासे। ऋ० १०।२४।२।
५- त्वष्टास्मै वज्रं स्वर्यं ततक्ष। ऋ० १।३२।२।
६- यं ते काव्य उशना मन्दिनं दाद् वृत्रहणं पार्यं ततक्ष वज्रम्। ऋ०१।१२१।१२
सहस्रभृष्टिमुशना वधं यमत्। ऋ० ५।३४।२।
७- [redacted] देवा वै प्रथमेनाह्नेन्द्राय वज्रं समभरन्। ऐ०ब्रा० ४।१।
८- [redacted] अयं यो वज्रः पुरुधा विवृत्तोऽवः सूर्यस्य बृहतः पुरीषात्। ऋ०१०।२७।२१
९- इन्द्रस्य वज्रः श्नथिता हिरण्ययः। ऋ०१।५७।२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh 

वज्र के अतिरिक्त इन्द्र के आयुधों में धनुष्य और बाण प्रमुख थे[१]।

शारीरिक विशेषतायें
---------------------

वैदिक साहित्य में इन्द्र के भौतिक रूप का वर्णन बहुत ही सुन्दर एवं आलंकारिक ढंग से किया गया है। उसका रूप मनुष्यों के समान है। शरीर, सिर, भुजाएँ आदि मनुष्यों के ही सदृश हैं। बाहु विशाल है। मूँछें बड़ी-बड़ी हैं। इसे सुन्दर अधरों वाला या 'सुशिप्र' अथवा 'शिप्रिन्'[२] कहा गया है। कभी-कभी 'हरिकेश' और 'हरिश्मश्रु' भी कहा गया है।

ऋग्वेद के अनुसार उसका आकार बहुत विशाल है। दो असीम लोक उसकी मुट्ठी के बराबर होते हैं[३]। द्युलोक और पृथ्वी को उसकी मेखला से भी लघु बतलाया गया है[४]। यदि पृथ्वी दस गुनी और विस्तृत होती तो उसके बराबर होती[५]।

---

१- ऋग्वेद ८।४५।४।, १०।१०३।२।, १०।१०३।३।

२- मैकडॉनेल, २०९० : वैदिक माइथॉलोजी (अनु० राय, रामकुमार) पृ० १०२।

३- इमे चिदिन्द्र रोदसी अपारे यत्संगृभ्णा मघवन्काशिरित्ते। ऋ० ३।३०।५।

४- ' अरं रोदसी कक्ष्ये नास्मै।' ऋ० १. १७३. ६.

५- ' यदिन्न्विन्द्र पृथिवी दशभुजिरहानि विश्वा ततनन्त कृष्टयः।
अत्राह ते मघवन् विश्रुतं सहो द्यामनु शवसा बर्हणा भुवत्।।ऋ०१।५२।११।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रशंसा इन्द्र की महत्ता और शक्ति का वर्णन अत्यन्त सुन्दर शब्दों में मिलता है। वह सम्पूर्ण विश्व का एक मात्र सम्राट् है।[१] सभी देवता उसमें समाहित होकर एक इन्द्र हो जाते हैं।[२] इस प्रकार वह एक मात्र देव भी है। न तो देव, न मनुष्य और न जल ही उसकी पराक्रम की सीमा तक पहुँच सके।[३] संसार की सभी शक्तियाँ उसमें निहित हैं।[४] सम्राट् के रूप में वह प्रजा को हर तरह से सन्तुष्ट करता है।[५]

सोम के प्रति लिप्सा - सोम इन्द्र का प्रिय पेय है। यद्यपि सभी देवगण सोमपान करते हैं, तथापि इन्द्र को सोमपान की इतनी लिप्सा थी कि वह कभी-कभी इसके लिए चोरी भी करता था। देवों और मनुष्यों में सर्वाधिक सोमपान करने वाला इन्द्र ही है।[६] केवल वायु (देवता) ही सोमपान करने में इसके निकट आ सकती है। "सोमपा" और "सोमपावन्" उपाधियाँ उसकी इसी विशिष्टता की द्योतक हैं। संग्राम में शत्रुओं पर विजय पाने के हेतु सोमपान करना अत्यन्त आवश्यक था। कहा जाता है कि वृत्र-वध के समय वह तीन झील सोम पी गया था।[७] ऐसा उल्लेख मिलता है कि जन्म के दिन ही उसकी माता ने उसे सोम पिला दिया था अथवा उसने स्वयं माता से लेकर पी लिया था।[८] यह भी कहा जाता है कि इन्द्र ने जन्मोपरान्त त्वष्टा को पराजित कर सोमपान किया था।[९]

---

१- "एको विश्वस्य भुवनस्य राजा स योधया च क्षययया च जनान्। ऋ० ३।४६।२।

२- यद्ध देवा भवथ विश्व इन्द्रे।" ऋ० ३।५४।१७।

३- "सत्यमित्तन्न त्वावाँ अन्यो अस्तीन्द्र देवो न मर्त्यो ज्यायान्। ऋ० ६।३०।४।

४- उत् त्वं मघवञ्छृणु यस्ते वष्टि ववक्षि तत्।
यद् वीळयासि वीळु तत्।। ऋ० ८. ४५. ६.

५- मनो मे तर्पयत वाचं मे तर्पयत प्राणं मे तर्पयत
चक्षुर्मे तर्पयत श्रोत्रं मे तर्पयतात्मानं मे तर्पयत प्रजां मे तर्पयत
पशून् मे तर्पयत गणान् मे तर्पयत, गणा मे मा वितृषन्।। य० (वा) ६।३१

६- इन्द्र इत्सोमपा एक इन्द्रः सुतपा विश्वायुः अन्तर्देवान्मर्त्यांश्च। ऋ० ८।२।४।

७- "त्री साकमिन्द्रो मनुषः सरांसि सुतं पिबद् वृत्रहत्याय सोमम्। ऋ० ५।२९।७

८- ऋग्वेद ३।४८।२,३। ३।३२।९, १०।

९- "त्वष्टारमिन्द्रो जनुषाभिभूयाऽऽमुष्या सोममपिबच्चमूषु। ऋ० ३।४८।४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

। ७ ।

बहुत अधिक सोमपान करने पर कष्ट भी झेलने पड़ते हैं। किन्तु वह इसकी कुछ भी ~~परवाह~~ चिन्ता नहीं करता था। परिणामत: जब ~~अधिक~~ कष्ट बढ़ गया तो देवगण ने सौत्रामणि यज्ञ द्वारा उसे स्वस्थ किया। सौत्रामणि अनुष्ठान किसी विचित्र और अनैतिक आख्यान पर आधारित है।[१]

अन्य खानपान - इन्द्र मधु-मिश्रित दूध पीता था।[२] बैल और भैंसों का मांस इसे बहुत प्रिय था।[३] यज्ञ के समय अन्न भी ग्रहण करता था।[४]

अन्य देवों के साथ सम्बन्ध- इन्द्र का अग्नि, वरुण, सूर्य, सोम, बृहस्पति, पूषन्, विष्णु और मरुत् आदि देवताओं के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध था। कहा जाता है कि इन्द्र ने दो प्रस्तरों के मध्य से अग्नि की उत्पत्ति की अथवा अग्नि को जल में छिपा हुआ पाया।[५] मरुद्गण इसके प्रिय, सहायक एवं प्रमुख मित्र थे। अनेक युद्धों में मरुद्गणों ने इसकी सहायता की थी। इस घनिष्ठता के कारण ही इसे 'मरुत्वत्' उपाधि से विभूषित किया गया था। विष्णु इसके विश्वासपात्र मित्र थे और दैत्यों के युद्ध में वह इन्द्र की सहायता करते थे। ऋक्संहिता के अनुसार, इन्द्र और विष्णु दोनों ही असुरों को जीतते रहते हैं। ये दोनों परस्पर स्पर्द्धा अर्थात् युद्ध करके एक-दूसरे को दबाने की इच्छा करते हैं, किन्तु इनमें से कोई भी नहीं हारता।[६]

---

१- कीथ, ए० बी०: वैदिक धर्म एवं दर्शन (प्रथम भाग), अनु० डा० सूर्यकान्त, पृ० १६२

२- "मध्वा संपृक्ता: सारघेण धेनवस्तूयमेहि द्रवा पिब।" ऋ० ८।४।८।

३- "पचन्ति ते वृषभाँ अत्सि तेषां पृक्षेण यन्मघवन् हूयमान:।" ऋ० १०।२८।३।

४- ऋग्वेद, ३।५२।७,८।, ३।३५।३।, ३।४३।४।, १।१६।२।

५- "यो अश्मनोरन्तरग्निं जजान संवृक्समत्सु स जनास इन्द्र:। ऋ० २।१२।३
निधीयमानमपगूळ्हमप्सु प्र मे देवानां व्रतपा उवाच।
इन्द्रो विद्वाँ अनु हि त्वा चचक्ष तेनाहमग्ने अनुशिष्ट आगाम्।" ऋ०१०।३२।६।

६- "उभा जिग्यथुर्न परा जयेथे न परा जिग्ये कतरश्चनैनो:।
इन्द्रश्च विष्णो यदपस्पृधेथां त्रेधा सहस्रं वि तदैरयेथाम्।" ऋ० ६।६९।८।
चतुर्वेदी, गिरिधर शर्मा: वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, पृ० ६१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१०१.

ऋग्वेद[1] में अनेक स्थलों पर इन्द्र को सूर्य के समान बतलाया गया है। एक मन्त्र में इन्द्र के नाम से ही सूर्य की स्तुति की गयी है।

'इन्द्राय गिरो अनिशितसर्गा अप: प्रेरयं सगरस्य बुध्नात्।' इन्द्र का विज्ञान श्रुति में सबसे गम्भीर है। इन्द्र के लिए दो विशेषण आते हैं - प्रथम जो सहस्वान् इन्द्र सूर्य-रूप है और द्वितीय मरुत्वान् इन्द्र, जो अन्तरिक्ष वायु या विद्युत्-स्वरूप है। यहाँ यह भी सूक्ष्म विभाग है कि सूर्य-मण्डल को द्युलोक कहा जाता है और उसमें प्रतिष्ठित प्राणशक्ति देवता को इन्द्र कहा जाता है। श्रुति[2] में इसका अति स्पष्ट उल्लेख है :

'यथाग्निगर्भा पृथिवी तथा द्यौरिन्द्रेण गर्भिणी' अर्थात् जैसे पृथ्वी के गर्भ में अग्नि है, वैसे द्युलोक (सूर्य-मण्डल) के गर्भ में इन्द्र है। एक स्थल पर इन्द्र को 'सवितृ' उपाधि से भी विभूषित किया गया है[3]। ऋग्वेद[4] में ही यह भी उल्लेख मिलता है कि इन्द्र ही सूर्य को उत्पन्न करने वाला है। उसने ही सूर्य को प्रकाशित किया और उसे आकाश में आरोहण करने के लिए प्रेरित किया। इस सम्बन्ध में यह कथन मिलता है कि जब इन्द्र दैत्यों के प्रधान का वध और पर्वतों से जल को मुक्त कर चुका तब उसने सूर्य, आकाश और उषा को उत्पन्न किया[5]।

---

१- चतुर्वेदी, गिरिधर शर्मा : वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, पृ० १७० ।

२- वही, पृष्ठ १७१ ।

३- 'ऋतं देवाय कृण्वते सवित्र इन्द्रायाहिघ्ने न रमन्त आप: ।' ऋ० २।३०।१।

४- ऋग्वेद, ८।३।२०,

५- 'यदिन्द्राहन्प्रथमजामहीनामान्मायिनाममिना: प्रोत माया: ।'
आत्सूर्यं जनयन् द्यामुषासं तादीत्ना शत्रुं न किला विवित्से ।। ऋ०१।३२।४।
साकं सूर्यं जनयन्द्यामुषासम् । ऋ० ६।३०।५ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



ऋग्वेद[१] में इन्द्र को पिता-तुल्य माना गया है। जिस प्रकार पिता अपने बच्चों की रक्षा करता है, उसी प्रकार वह भी मनुष्यों की रक्षा करता है। कहा जाता है कि इन्द्र अजर है। उस पर वर्ष माह और दिन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता[२]। तैत्तिरीयसंहिता[३] में इन्द्र को सब रूपों का बनाने वाला कहा गया है। वह सौंदर्य का स्रोत भी माना जाता है[४]। श्रुति में कहा गया है कि ऋक् और साम वाक्रूप होने से इन्द्र हैं-- वाक् ऐन्द्री कही जाती है। इन्द्र उसका अधिष्ठाता है[५]। तैत्तिरिय शाखा में[६] चित्रा नक्षत्र के स्वामी को 'इन्द्र' कहा गया है। वस्तुत: वैदिक प्रक्रिया के अनुसार सभी स्थान इन्द्र-तत्त्व से परिपूर्ण हैं[७]।

---

१- "तिष्ठा सु कं मघवन् मा परागा: सोमस्य नु त्वा सुषुतस्य यक्षि।
पितुर न पुत्र: सिचम् आ रभेत।" ऋ० ३।५३।२
बोस, ए.सी.: द कॉल ऑव् द वेदाज़, 'द डिविनिटी ऐज़ फादर टू दि चाइल्ड', पृ० ६४।

२- "न य जरन्ति शरदो न मासा न द्याव इन्द्रम् अवकर्शयन्ति।
वृद्धस्य चिद् वर्धताम् अस्य तनू: स्तोमेभिर् उक्थैश्च शस्यमाना"। ऋ० ६।२४।७
वही, 'दि एजलेस' पृष्ठ १८१।

३- चतुर्वेदी, गिरिधर शर्मा: वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, पृ० १८१।

४- "य: पृथिवीश्च प्रस्वरश्च धर्मणा वि दाने व्य वनीरधारय:।
यश्चासमा अजनो दिद्युतो दिव उरुरूर्वां अभित: सास्युक्थ्य:।।" ऋ० २।१३।७।
बोस, ए०सी०: वही, 'द सोर्स ऑव् ब्यूटी', पृ० १५८।

५- चतुर्वेदी, गिरिधर शर्मा: वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, पृ० ४४।

६- वही, पृष्ठ १८३

७- वही, पृष्ठ १३४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१०।

वैदिक काल की इन्द्र की स्तुतियों में उनके २६ नाम मिलते हैं। ये नाम-- वायु, वरुण, रुद्र, इन्द्र, पर्जन्य, बृहस्पति, ब्रह्मणस्पति, क्षेत्रों के अधिपति, ऋत, वास्तोष्पति, वाचस्पति, अदिति, क, यम, मित्र, विश्वकर्मा, सरस्वत्, वेन, मन्यु, असुनीति, जलों का पुत्र, दधिका, धातृ, तार्क्ष्य, पुरूरवस्, मृत्यु हैं।[१] इससे स्पष्ट होता है कि ये सभी इन्द्र के ही रूप हैं।

<u>पराक्रम</u> - वैदिक साहित्य में इन्द्र को शूर, वीर और पराक्रमी योद्धा के रूप में दर्शाया गया है। उसका सबसे महत्वपूर्ण शौर्य एवं पराक्रम का कार्य वृत्र का वध है। वृत्र एक दैत्य था। इसके बुरे प्रभाव से नदियों का प्रवाह रुक गया था और सप्तसिन्धु प्रदेश की सातों नदियों की धारा रुक गयी थी। इन्द्र अपने वज्र से उसकी पीठ पर प्रहार करता है और उसके मुख का तीक्ष्ण शस्त्रों से वेधन करता है। इसीलिए इसे "अप्सुजित्" उपाधि प्रदान की गयी। वृत्र का वध करके इसने बन्दी गायों के सदृश जलधाराओं को मुक्त किया, जिससे वे रंभाती गायों की भाँति सागर की ओर प्रवाहित होने लगीं।[२] ऋग्वेद में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि इन्द्र ने वृत्र का वध अकेले अपने ही पराक्रम से किया था। इसी कारण इसका "वृत्रहन्" नाम पड़ा, किन्तु इस युद्ध में अन्य देवताओं ने भी साथ दिया था।

इसके अतिरिक्त उसने अनेक राक्षसों का संहार किया जिनमें उरव, विश्वरूप, अर्बुद प्रमुख थे। अर्बुद को इसने पैर से कुचल कर और हिम से वेधन करके मारा था।[३] इन्द्र द्वारा मानव-शत्रु कृष्णत्वच दासों अथवा दस्युओं के पराजित होने का भी उल्लेख मिलता है।[४] उसने गतिमान् पर्वतों के पंख काटकर उन्हें स्थिर बनाया। ये पंख ही गर्जन करने वाले मेघ बन गये थे।[५]

---

१- (अनुवादक) राय, रामकुमार : शौनकीय बृहद्देवता, पृष्ठ ३६।

२- ऋग्वेद १।१६५।८, ७।२१।६।

३- महान्तं चिदर्बुदं नि क्रमीः पदा। ऋ० १।५१।६।

[illegible]- हिमेनाविध्यदर्बुदम्। ऋ० ८।३२।२६।

४- स वृत्रहेन्द्रः कृष्णयोनीः पुरन्दरो दासीरैरयद्वि। ऋ० २।२०।७।

५- ऋग्वेद २।१२।२, १०।४४।८। मैत्रायणी संहिता, १।१०।१३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१७११

कहा जाता है कि इन्द्र ने पृथ्वी को धारण किया और आकाश को ऊपर उठाया तथा पृथ्वी एवं आकाश को एक चर्म के समान फैलाया।[1]

इसके अतिरिक्त अन्य कथाएँ भी मिलती हैं, जिनके अन्तर्गत इसके द्वारा यदु एवं तुर्वश को सुरक्षित रूप से नदियों के उस पार पहुँचाने की कथा महत्वपूर्ण है।[2] राजा सुदास के संघर्षों में इसने तृत्सु पुरोहितों की प्रार्थना पर सुदास की सहायता की और उनके शत्रुओं को परुष्णी नदी में डुबो दिया।[3]

इन्द्र ही एक ऐसा देवता है जिसका आह्वान मनुष्य समर में करता है। उसकी एक बड़ी विशेषता धन देने की प्रवृत्ति है। वह अपने उपासकों के साथ मित्र, भाई, पिता और माता जैसे निकट सम्बन्ध में आता है। इस सम्बन्ध में गृत्समद की कथा उल्लेखनीय है। गृत्समद ऋषि एक समय तप के साथ अपना सायुज्य स्थापित करके इन्द्र के समान विराट् शरीर धारण किये हुए एक मुहूर्त में ही दिव्यलोक, आकाश और पृथ्वी पर प्रकट हुए। महान् पराक्रमी दो दैत्य धुनि और चुमुरि उन्हें इन्द्र समझकर उन पर आयुधों सहित टूट पड़े। इन दोनों के पाप-पूर्ण भाव को जानकर ऋषि ने इन्द्र के कृत्यों का कीर्तन किया। इससे दोनों दैत्यों में भय का संचार हुआ। इसी समय इन्द्र ने उचित अवसर समझकर उन दोनों दैत्यों को मार गिराया। इसके बाद शक्र ने ऋषि गृत्समद से कहा कि वे उसे प्रिय के रूप में देखें क्योंकि ऋषि उसके प्रिय हो गये थे। इन्द्र ने उनके तप को अक्षय होने का वरदान दिया, साथ ही उनको एक और वर मांगने के लिए कहा तथा ऋषि की इच्छानुसार उन्हें वर दिया। तपश्चात् मैत्रीभाव से उनका हाथ पकड़ कर वह अपने आवास में आया, वहाँ उनका आदर तथा विधिवत् उपचारों द्वारा पूजन किया। अपनी मित्रता के कारण इन्द्र ने उनका नाम गृत्समद रखा क्योंकि वे शुनहोत्र के पुत्र थे।[4]

---

१- ऋग्वेद, ८।३।६।, ८।६।५।

२- ऋग्वेद, १।१७४।६।

३- ऋग्वेद ७।३३।३।, ७।१८।६,९३।

४- (अनु०) राय, रामकुमार : शौनकीय बृहद्देवता, पृ० १३०-३३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन्द्र के "कौशिक"[1] विशेषण से ज्ञात होता है कि वह कुशिक-कुल का देवता था। वह उदारता में अनुपम है। अत: "मघवन्" उपाधि वैदिक कर्मकाण्ड सम्बन्धी साहित्य में केवल उसी को दी गयी है। वेदोत्तरकालीन ग्रन्थों में तो यह उसका अभिधान ही बन गया।

ऋग्वेद में इन्द्र के चरित्र का कम महनीय पक्ष उसके अत्यधिक सोमपान में उभरता है। एक परवर्ती रोचक सूक्त में सोमपान किये हुए इन्द्र का स्वगत भाषण आता है, जिसमें वह सोम के उन्माद में "कन्दुक इव ब्रह्माण्ड नचाऊँ" जैसी गर्वोक्ति करता है। सोमपान की प्रवृत्ति ने ही इसके द्वारा पिता की हत्या करा दी।[2] ऋग्वेद १०।११।६ में आये हुए "जार आ भगम्" के आधार पर अहल्याजार की कथा प्रचलित हुई।[3] वेद में अहिल्या रात्रि है, गौतम चन्द्र है और सूर्य ने इन्द्र का रूप धारण किया है।[4] इन घटनाओं को छोड़कर अन्य कोई भी घटना इन्द्र की लोलुपता से सम्बद्ध नहीं है।

## उत्तर वैदिक काल में इन्द्र

उत्तर वैदिक काल में इन्द्र देवताओं का प्रतिनिधित्व करता है। इस समय उसे दक्षिण दिशा का संरक्षक देव कहा गया है।[5]

अथर्ववेद[6] में इन्द्र, सोम, अग्नि, त्वष्टा एवं धाता आदि देवताओं की उत्पत्ति एवं उसके पूर्व रूप के सम्बन्ध में कहा गया है कि इन्द्र से इन्द्र उत्पन्न हुआ, सोम से सोम उत्पन्न हुआ, अग्नि से अग्नि की उत्पत्ति हुई, त्वष्टा से त्वष्टा की एवं धाता से धाता की उत्पत्ति हुई अर्थात् इन्द्रादि देवों के पूर्व रूप भी इन्द्र आदि ही थे अथवा उनका उत्पादक मूलकारण इन्द्र भी आदिशक्ति-सम्पन्न था, इसलिए उससे वे उत्पन्न हुए। अथर्ववेद[7] के अनुसार इन्द्र की माता प्रजापति की कन्या "एकाष्टका" थी। वज्र के अतिरिक्त इन्द्र का

---

१-- ऋग्वेद १।१०।११।

२- वही, ४।१८।१२।

३- शर्मा, मुंशीराम : वैदिक निबन्धावली, पृष्ठ १६८।

४- वही, पृष्ठ १६६।

५- अथर्ववेद १२।३।२४।

६- "इन्द्रादिन्द्र: सोमात् सोमो अग्नेरग्निरजायत। त्वष्टा ह जज्ञे त्वष्टुर्धातुर्धाताजायत।" अथ० ३।१०।१२।

७- "एकाष्टका तपसा तप्यमाना जजान गर्भं महिमानमिन्द्रम्।" अथ० ३।१०।१२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आयुघ अंकुश भी था[१]। इसके पास शत्रुओं को आच्छादित करने के लिए जाल भी रहता था[२]। इसे घनुर्धारी रूप में भी दिखाया गया है[३]।

इन्द्र का पद- अथर्ववेद[४] से ज्ञात होता है कि प्रजापति, परमेष्ठी, विराट् और इन्द्र, ये उत्तरोत्तर विभूतिमान् पद हैं जिनको ब्रह्मचारी ही प्राप्त कर सकता है और वही साक्षात् इन्द्र होकर असुरों,दुष्टों का संहार करता है। आचार्य स्वयं प्रथम ब्रह्मचारी है। ब्रह्मचारी पुरुष ही बाद में प्रजापति,प्रजा का पालक,उत्तम गृहाश्रमी होता है। प्रजा का पालक गृहस्वामी ही नाना प्रकार से शोभा पाता है। वशी पुरुष ही विराट्,अनेक प्रकार से सुशोभित होने वाला साक्षात् इन्द्र,आचार्य, अथवा विराट् ही सर्ववशकारी 'इन्द्र' एवं सर्वैश्वर्य का स्वामी होता है[५]। यह भी कहा गया है कि ब्रह्मचर्य के तपोबल से देव, विद्वान् पुरुष मृत्यु का भी विनाश कर देते हैं, वे मृत्युंजय हो जाते हैं। निश्चय ही इन्द्र, ऐश्वर्यवान् राजा ब्रह्मचर्य के बल पर विद्वान् प्रजावासियों को अपने राष्ट्र में स्वर्ग के समान सुख प्राप्त कराता है। अथवा इन्द्र परमेश्वर देव, विद्वानों को अपने ब्रह्मचर्य के बल से मोक्ष प्राप्त कराता है। (इन्द्र) सूर्य ब्रह्मचर्य के बल से आकाशस्थ-दिव्य पदार्थों को प्रकाश देता है[६]।

---

१- " यस्ते अंकुशो वसुदानो बृहन्निन्द्र हिरण्ययः।" अथ० ६।८२।३।

२- अथर्ववेद, ८।८।५,६,७।

३- वही, ५६।६।३।

४- " ब्रह्मचारी जनयन् ब्रह्मापो लोकं प्रजापतिं परमेष्ठिनं विराजम्।
गर्भो भूत्वामृतस्य योनाविन्द्रो ह भूत्वासुरांस्ततर्ह॥" अथ० ११।५।७।

५- अथर्ववेद ११।५।१६।

६- " ब्रह्मचर्येणतपसा देवा मृत्युमपाघ्नत।
इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्व राभरत्॥" अथ० ११।५।१९।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## इन्द्र की सर्व लोकों में स्थिति

उत्तर वैदिक काल में ऐसा माना जाता था कि इन्द्र में समस्त लोक स्थित हैं, उस इन्द्र में 'तप' स्थित है, समस्त परम ज्ञान स्थित है। उस जगदाधार परमेश्वर को ही 'इन्द्र', परमैश्वर्यवान्, साक्षात् माना गया है। इसी जगत् के आधारभूत 'स्कम्भ' में समस्त संसार विराजमान है।[1]

## संग्राम में परमैश्वर्यवान्

ऐसा कहा जाता है कि इन्द्र समस्त ऐश्वर्यों के निमित्त होने वाले संग्राम में परमैश्वर्यवान् राजा के समान विराजता है।[2]

## समस्त लोकों से आवृत

सूर्य की किरणों से अन्तरिक्ष भाग जिस प्रकार पूर्ण हो जाता है उसी प्रकार परमात्मा के प्रकाश से अप्रकाशमान् समस्त जड़ जगत् पूर्णरूप से जगमगाता है और महेन्द्र प्रकाश से आवृत विभूतिमान् होकर समस्त लोकों से आवृत है।[3]

## मृत्यु से भी अधिक शक्तिशाली एवं सबका दृष्टा-

इन्द्र को मृत्यु से भी अधिक शक्तिशाली एवं दरिद्रता से भी बलशाली कहा गया है।[4] इसके अतिरिक्त उसे लोक-प्रकाश-स्वरूप सबका दृष्टा समस्त प्रजाओं का पालक भी माना गया है।[5]

---

१- अथर्ववेद १०।७।३०।

२- वही १०।८।४२।

३- रश्मिभि नैभ आभृतं महेन्द्र एत्यावृत: ।। अथ० १३।४।२।

४- अथर्ववेद १३।४।४६,४७।

५- वही १७।१।१८।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## दुष्टों का नाशक -

बकवादी तथा बुरी सलाह देने वाले लोग जो वशा को दान न देने के लिए कहा करते हैं वे अपनी दुष्टचित्तता के कारण इन्द्र के मन्यु द्वारा विनष्ट हो जाते हैं।[१]

## इन्द्र स्तुति

### इन्द्र का माता के समान रक्षक होना-

उत्तर वैदिक काल में इन्द्र की अनेक प्रकार से स्तुति की गयी है। इस समय इन्द्र और अग्नि तथा राजा और सेनापति को प्रजाओं के लिए प्रजावती माता के समान रक्षक माना गया है[२] और इनसे अपनी रक्षा के लिए स्तुति की गयी है।

### शत्रु का दमन करने के लिए प्रार्थना-

एक स्तुति में इन्द्र से प्रार्थना की गयी है कि इन्द्र आत्मज्ञान को नष्ट करने वाले शत्रु (प्राणों में रमणकारी विषयभोगों) को जिस प्रकार पीड़ित करता है उसी प्रकार यह विद्वानों और शत्रुओं को वरण करने में समर्थ, प्रकाशमान, कान्तिमान्, आश्रय-वृक्ष के समान सब का पालक राजा मेरे हृदय में विराजे। वह मेरे शत्रुओं का विशेषरूप से दमन करे।[३]

### सभी कार्यों में अग्रगामी होने के लिए निवेदन-

इन्द्र की स्तुति में उसे सब कार्यों में अग्रगामी होने, सहायता करने और सभी कार्यों में अग्रसर होने के लिए प्रार्थना की गयी है।[४]

---

१- अथर्ववेद १२।४।५१।

२- "ग्रिवास्ते कृत्ये पादौ चापि कर्त्स्यामि निर्द्रव ।
इन्द्राग्नी अस्मान् रक्षतां यौ प्रजानां प्रजावती ।।" अथ० १०।१।२१।

३- "अयं मे वरण उरसि राजा देवो वनस्पतिः ।
स मे शत्रून् वि बाधतामिन्द्रो दस्यूनिवासुरान् ।।" अथ० १०।३।११।

४- " सा नो भूमिरा दिशतु यद्धनं कामयामहे ।
भगो अनुप्रयुङ्क्तामिन्द्र एतु पुरोगवः ।।" अथ० १२।१।४०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि इन्द्र उत्तर वैदिक काल में भी देवताओं का राजा, सेनापति, प्रजारक्षक, शत्रुओं का संहार करने वाला एवं सर्वलोक में स्थित माना गया है।

## महाभारत एवं अन्य पौराणिक साहित्य में इन्द्र

महाभारत एवं अन्य पौराणिक साहित्य में 'इन्द्र' का उल्लेख देवताओं के राजा के रूप में मिलता है और इसका चरित्र एक विशिष्ट मनुष्य के समान दर्शाया गया है।

**परिवार -** इस काल में इन्द्र की माता का नाम 'अदिति' मिलता है और इसके पिता काश्यप कहे गये, इन्द्र की महिषी इन्द्राणी को 'शची' नाम से अभिहित किया गया और इन्द्र को अनेक स्थानों पर शचीपति कहा गया। विष्णुपुराण[१] में देवेन्द्र और इन्द्राणी की उपमा विष्णु और लक्ष्मी से दी गयी है।

**आयुध-** इन्द्र का अपना विशिष्ट आयुध 'वज्र' था। विश्वकर्मा ने वृत्रासुर के वध के लिए दधीचि ऋषि की अस्थियों से इसका निर्माण किया था[२]।

**वाहन-** इन्द्र का वाहन ऐरावत हाथी था। इसे नागराज, गजेन्द्र या गजराज भी कहा जाता था। इस पर वह आरूढ़ हो युद्ध करता था। पारिजात-हरण के बाद भगवान् श्रीकृष्ण से युद्ध करते समय इन्द्र को नागराज पर स्थित दिखाया गया है[३]।

---

१- "लक्ष्मीस्वरूपमिन्द्राणी देवेन्द्रो मधुसूदनः।" वि०पु० १।८।६।

२- श्रीमद्भागवत ६।१०।

३- विष्णुपुराण ५।३०।५५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



<u>मित्र-</u> इन्द्र के प्रिय मित्र मरुद्गण[१] थे। इनकी उत्पत्ति इन्द्र ने की थी। कहा जाता है कि पूर्वकाल में देवासुर संग्राम में इन्द्रादि देवताओं द्वारा दिति के पुत्र दैत्यगणों के पराजित होने पर दिति ने इन्द्र का गर्व नष्ट करने वाले पुत्र की इच्छा से अपने पति को प्रसन्न किया। उसकी तपस्या से संतुष्ट होकर कश्यप ने उसमें गर्भ का आधान किया और उसे सौ वर्षों तक पवित्र रहते हुए गर्भ धारण करने का आदेश दिया जिससे इन्द्र के दर्प को चूर्ण करने वाला पुत्र उत्पन्न हो। दिति ने ऐसा ही किया। इन्द्र को जब यह समाचार ज्ञात हुआ तो वह बूढ़े ब्राह्मण के वेष में दिति के पास आकर रहने लगा। सौ वर्ष पूर्ण होने में कुछ ही समय रह गया था जब एक दिन दिति भोजन के पश्चात् बिना पैर धोये ही सो गयी। उचित अवसर समझकर इन्द्र हाथ में वज्र लेकर उसके गर्भ मे प्रविष्ट हो गया और वज्र से उस गर्भ के सात टुकड़े कर दिये। जब गर्भ रोने लगा तो उसने "मा रोदी:" (मत रोओ) कहते हुए पुन: एक-एक के सात-सात टुकड़े कर दिये। ये उन्नचास 'मरुत्' के नाम से विख्यात हुए, क्योंकि जन्म होते ही इन्द्र ने उनसे "मा रोदी:" कहा था। ये सभी मरुत् इन्द्र के सहायक देवता हुए।

देवाचार्य बृहस्पति[२] महर्षि अंगिरा के पुत्र थे। इनके छोटे भाई संवर्त थे। बृहस्पति के द्वारा सताये जाने पर संवर्त धन-दौलत का मोह छोड़ दिगम्बर होकर वन में निवास करने लगे थे। इसी समय इन्द्र ने समस्त असुरों को जीतकर त्रिभुवन का साम्राज्य प्राप्त कर लिया। तदनन्तर उन्होंने अंगिरा ऋषि के ज्येष्ठ पुत्र विप्रवर बृहस्पति को अपना पुरोहित बनाया।

---

१- विष्णुपुराण २।२१।

२- महाभारत, अश्वमेधपर्व, पाँचवाँ अध्याय।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अंगिरा के पहले के यजमान उस समय राजा करन्धम एवं उनके [redacted] पौत्र मरुत्त इन्द्रतुल्य-तेजस्वी, धर्मात्मा और कठोर व्रत का पालन करने वाले थे। मरुत्त सदैव इन्द्र से स्पर्धा करता था। जब देवताओं सहित इन्द्र किसी तरह बढ़ न सका, तब बृहस्पति को बुलाकर उनसे कहा कि वे उसका प्रिय चाहते हों तो मरुत का यज्ञ तथा श्राद्धकर्म न करायें, क्यों वह पृथ्वी का राजा है जब कि देवराज तीनों लोकों का स्वामी है। इस कारण वे या तो मरुत्त के गुरु बनें या उसके। इसपर बृहस्पति ने इन्द्र का गुरु अथवा आचार्य बनना स्वीकार किया तथा प्रतिज्ञा ली कि अब वे किसी मनुष्य के यज्ञ में जाकर स्रुवा हाथ में न लें। इस बात से इन्द्र का मात्सर्य दूर हुआ। इस प्रकार बृहस्पति देवों के आचार्य बन गये।

इन्द्र सभा- महाभारत में इन्द्र-सभा का विस्तृत वर्णन मिलता है। इन्द्र की तेजोमयी दिव्य सभा सूर्य के समान प्रकाशित होती थी। विश्वकर्मा के प्रयत्नों से उसका निर्माण हुआ था। स्वयं इन्द्र ने सौ यज्ञों का अनुष्ठान करके उस पर विजय पायी थी। उसकी लम्बाई डेढ़ सौ और चौड़ाई सौ योजन की थी। वह आकाश में विचरने वाली और इच्छा के अनुसार तीव्र या मन्द गति से चलने वाली थी। उसकी ऊँचाई भी पाँच योजन की थी। उसमें जीर्णता, शोक और थकान आदि का प्रवेश न था। वहाँ भय नहीं था, वह मंगलमयी और शोभासम्पन्न थी। उसमें ठहरने के लिए सुन्दर-सुन्दर महल और बैठने के लिए उत्तमोत्तम सिंहासन बने हुए थे। वह रमणीय सभा दिव्य वृक्षों से सुशोभित होती थी। उस सभा में सर्वश्रेष्ठ सिंहासन पर देवराज इन्द्र शोभा में लक्ष्मी के समान प्रतीत होने वाली इन्द्राणी शची के साथ विराजता था। उस समय वह अवर्णनीय रूप धारण करता था। उसके मस्तक पर किरीट [redacted] और दोनों भुजाओं में लाल रंग के बाजूबन्द शोभा पाते थे। उसके शरीर पर स्वच्छ वस्त्र और कण्ठ में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विचित्र माला सुशोभित होती थी । वह लज्जा, कीर्ति और कान्ति-इन देवियों के साथ उस दिव्य सभा में विराजमान [redacted] होती था । उस दिव्य सभा में सभी मरुद्गण और गृहवासी देवता सौ यज्ञों का अनुष्ठान पूर्ण कर लेने वाले महात्मा इन्द्र की प्रतिदिन सेवा करते थे । सिद्ध, देवर्षि, साध्यदेवगण तथा मरुत्वान्, ये सभी सुवर्ण-मालाओं से सुशोभित हो तेजस्वी रूप धारण किये एक साथ उस दिव्य सभा में बैठकर शत्रुदमन महामना देवराज इन्द्र की उपासना करते थे । वह सभी देवताओं और अपने अनुचरों के साथ वहाँ विराजमान होता था । वह दिव्य-रूपधारी होने के साथ ही उत्तमोत्तम अलंकारों से अलंकृत [redacted] था । इसी प्रकार जिनके पाप धुल गये हैं, वे अग्नि के समान उद्दीप्त होने वाले सभी निर्मल देवर्षि वहाँ इन्द्र की उपासना करते थे । वे देवर्षिगण तेजस्वी, सोमयाग करने वाले तथा शोक और चिन्ता से शून्य थे ।

पराशर, पर्वत, सावर्णि गालव, शंख, लिखित, गौरशिरा मुनि, दुर्वासा, क्रोधन, श्येन, दीर्घतमा मुनि, पवित्रपाणि, सावर्णि (द्वितीय), याज्ञवल्क्य, भालुकि, उद्दालक, श्वेतकेतु, ताण्ड्य, भाण्डायनि, हविष्मान्, गरिष्ठ, राजा हरिश्चन्द्र, हृद्य, उदरशाण्डिल्य, पराशरनन्दन व्यास, कृषीवल, वातस्कन्ध, विशाख, विधाता, काल, करालदन्त, त्वष्टा, विश्वकर्मा तथा तुम्बुरु- ये और दूसरे अयोनिज या योनिज मुनि एवं वायु पीकर रहने वाले तथा तथा हविष्य पदार्थों को खाने वाले महर्षि सम्पूर्ण लोकों के अधीश्वर वज्रधारी इन्द्र की उपासना करते थे ।

सहदेव, सुनीथ, महातपस्वी वाल्मीकि, सत्यवादी शमीक, सत्यप्रतिज्ञ प्रचेता, मेधातिथि, वामदेव, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, मरुत्त, मरीचि, महातपस्वी स्थाणु, कक्षीवान्, गौतम, तार्क्ष्य, वैश्वानरमुनि, षडर्तु, कवष, धूम्र, रैभ्य, नल, परावसु, स्वस्त्यात्रेय, जरत्कारु, कहोल, काश्यप, विभाण्डक, ऋष्यशृंग, उन्मुख, विमुख, कालकवृक्षीय, मुनि, आश्राव्य,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



हिरण्मय, संवर्त, देवहव्य, पराक्रमी विष्वक्सेन, कण्व, कात्यायन, गार्ग्य, कौशिक, दिव्य जल, औषधियाँ, श्रद्धा, मेधा, सरस्वती, अर्थ, धर्म, काम, विद्युत्, जलधर मेघ, वायु, गर्जना करने वाले बादल, प्राची दिशा, यज्ञ के हविष्य को वहन करने वाले सत्ताइस पावक, सम्मिलित अग्नि और सोम, संयुक्त इन्द्र और अग्नि, मित्र, सविता, अर्यमा, भग, विश्वेदेव, साध्य, बृहस्पति, शुक्र, विश्वावसु, चित्रसेन, सुमन, तरुण, विविध यज्ञ, दक्षिणा, ग्रह, तारा और यज्ञनिर्वाहक मन्त्र, ये सभी वहाँ इन्द्र-सभा में बैठते थे।

इसी प्रकार मनोहर अप्सराएँ तथा सुन्दर गन्धर्व, नृत्य, वाद्य, गीत एवं नाना प्रकार के हास्यों द्वारा देवराज इन्द्र का मनोरंजन करते थे। इतना ही नहीं, वे स्तुति, मंगलपाठ और पराक्रमसूचक कर्मों के गायन द्वारा बल और वृत्र नामक असुरों के नाशक महात्मा इन्द्र का स्तवन करते थे। ब्रह्मर्षि, राजर्षि तथा सम्पूर्ण देवर्षि माला पहने, वस्त्राभूषणों से विभूषित हो, नाना प्रकार के दिव्य विमानों द्वारा अग्नि के समान देदीप्यमान होते हुए वहाँ आते-जाते रहते थे। बृहस्पति और शुक्र वहाँ नित्य विराजते थे। ये तथा और भी बहुत से संयमी महात्मा, जिनका दर्शन चन्द्रमा के समान प्रिय था, चन्द्रमा जैसे चमकीले विमानों द्वारा वहाँ उपस्थित होते थे। भृगु और सप्तर्षि भी जो साक्षात् ब्रह्मा जी के समान प्रभावशाली थे, इन्द्र-सभा की शोभा बढ़ाते थे।[१]

इन्द्रतीर्थ- महाभारत[२] में इन्द्रतीर्थ का उल्लेख मिलता है। जहाँ पर इन्द्र ने विधिपूर्वक बिना किसी विघ्न के सौ यज्ञों को पूर्ण किया था, वह स्थान इन्द्रतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हुआ और सौ यज्ञों को करने के कारण इन्द्र शतक्रतु नाम से विख्यात हुआ।

---

१- महाभारत, सभापर्व, सातवाँ अध्याय।

२- वही, शल्यपर्व, उनचासवाँ अध्याय।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

। २२।

आख्यान- महाभारत और अन्य पुराणों में इन्द्र से सम्बन्धित अनेक प्रकार के आख्यान मिलते हैं। उनमें से कुछ प्रमुख आख्यान ही यहाँ दिये जा रहे हैं। इन आख्यानों से ज्ञात होता है कि 'इन्द्र' किसी का व्यक्तिगत नाम न था, बल्कि यह एक पद का नाम था। सौ अश्वमेघ यज्ञ को करने वाला व्यक्ति इन्द्रपद को प्राप्त कर लेता था। प्रत्येक मन्वन्तर में अलग-अलग लोगों ने अपने कर्मानुसार इन्द्र पद को प्राप्त किया था। पौराणिक साहित्य में प्रत्येक मन्वन्तर के इन्द्र का नाम भी दिया गया है[१]। यथा-

| मन्वन्तर | इन्द्र पद प्राप्त करने वाले व्यक्ति |
|---|---|
| प्रथम | भगवान् यज्ञ-पुरुष |
| द्वितीय | रोचन [redacted] |
| तृतीय | सत्यजित् |
| चतुर्थ | त्रिशिख |
| पंचम | विभु |
| षष्ठ | मन्त्रद्रुम |
| सप्तम | पुरन्दर |
| अष्टम | विरोचन पुत्र बलि |
| नवम | अद्भुत |
| दशम | शम्भु |
| एकादश | वैधृत |
| द्वादश | ऋतधामा |
| त्रयोदश | दिवस्पति |
| चतुर्दश | शुचि |

---

१- श्रीमद्भागवत ८।१।,५,१३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



इन्द्र पद की लिप्सा - इस पद पर प्रतिष्ठित व्यक्ति में अपने पद की लिप्सा सदैव विद्यमान रहती थी। वह सदैव अपने पद को बनाये रखने के लिए प्रयत्नशील रहता था। अत: वह इसका सदैव ध्यान रखता था कि पृथ्वी पर कोई भी व्यक्ति सौ अश्वमेध यज्ञ पूर्ण न कर सके। इसीप्रकार इन्द्र जब किसी को तपस्या करते देखता तो उसके मन में यह संशय उत्पन्न हो जाता कि कदाचित् वह व्यक्ति अपने तप के द्वारा उसके राज्य की कामना तो नहीं कर रहा है। यही कारण था कि वह जब कभी किसी को यज्ञ या तप करते देखता तो उसमें विघ्न डालने से भी नहीं चूकता था। कभी-कभी वह अपने इस प्रयत्न में विफल भी हो जाता था। इस सम्बन्ध में अनेक कथाएँ प्राप्त होती हैं।

राजा पृथु की कथा[१]

कहते हैं कि राजा पृथु ने महाराज मनु के ब्रह्मावर्त क्षेत्र में सौ अश्वमेध यज्ञों की दीक्षा ली। हरि की कृपा से उन्होंने यज्ञानुष्ठान किया। इससे उनका बड़ा उत्कर्ष हुआ। यह देखकर शतक्रतु शंकित हुआ कि इस प्रकार से तो पृथु के कर्म उसके कर्मों की अपेक्षा अधिक बढ़ जायेंगे। अत: वह यज्ञमहोत्सव को सहन न कर सका और विघ्न डालने के लिए उसने पृथु के अन्तिम यज्ञ का घोड़ा हर लिया। अपने कवच रूप से पाखण्डी धर्मात्मा के वेष में वह घोड़े को लिये आकाश-मार्ग से बड़ी शीघ्रता से जाने लगा। महर्षि अत्रि ने उसके इस कर्म को देख लिया। उन्होंने पृथुकुमार को देवताधम इन्द्र को मार डालने का आदेश दिया--

"वधान्निवृत्तं तं भूयो हन्तवे त्रिरचोदयत्।
जहि यज्ञहनं तात महेन्द्रं विबुधाधमम्॥"

इस आदेश पर पृथुकुमार क्रोध से भर कर इन्द्र को मारने दौड़ा। उसे पीछे आते देखकर स्वर्गपति इन्द्र घोड़ा वहीं छोड़कर अन्तर्धान हो गया। यज्ञ पशु प्राप्त कर पृथु ने अपना यज्ञ सम्पन्न किया। इस प्रकार इन्द्र उनके यज्ञ को भंग न कर सका।

---

१- श्रीमद्भागवत ४।१९।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसी प्रकार इन्द्र ने जनमेजय[1] तथा सगर[2] के अश्वमेघ यज्ञ में विघ्न डाला था। जनमेजय ने तो क्रोधित होकर उसे शाप भी दिया था।

## इन्द्र द्वारा नारद मुनि के तप को भंग करने का प्रयास[3]

एक समय नारद मुनि तप कर रहे थे। यह देखकर इन्द्र शंकित हो उठा और उनकी तपस्या को भंग करने के लिए कामदेव को भेजा। किन्तु नारद मुनि पर कामदेव का कोई प्रभाव न पड़ा और इन्द्र असफल रहा। इसी प्रकार इन्द्र 'नर' और 'नारायण' की तपस्या को भंग करने में भी विफल हुआ था।

## नर और नारायण के तप को भंग करने का प्रयत्न[4]

दक्ष प्रजापति की कन्या मूर्ति और धर्म से भगवान् ने ऋषिश्रेष्ठ शान्तात्मा 'नर' और 'नारायण' के रूप में उत्पन्न किये। उन्होंने आत्मतत्त्व का साक्षात्कार करने वाले उस भगवदाराधनरूप कर्म का उपदेश दिया, जो वास्तव में कर्मबन्धन से छुड़ाने वाला और नैष्कर्म्य स्थिति को प्राप्त कराने वाला था। उन्होंने स्वयं भी वैसे ही कर्म का अनुष्ठान किया। बड़े बड़े ऋषि-मुनि उनके चरण-कमलों की सेवा करते रहते थे। ये अपनी घोर तपस्या के द्वारा मेरा धाम छीनना चाहते हैं-- इन्द्र ने ऐसी आशंका करके स्त्री, वसन्त आदि के साथ कामदेव को उनकी तपस्या में विघ्न डालने के लिए भेजा। कामदेव को भगवान् की महिमा का ज्ञान न था,

---

१- महाभारत-खिलभाग ; हरिवंश (हरिवंशपुराण), भविष्यपर्व, अ० ५

२- विष्णुपुराण ४।४।

३- शिवपुराण, रुद्रसंहिता-सृष्टिखण्ड।

४- श्रीमद्भागवत ११।४।६-१६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसलिए वे उनके तप को भंग करने का प्रयत्न करने लगे । आदिदेव नर-नारायण ने इसे इन्द्र का कुचक्र समझकर भय से काँपते हुए काम आदिकों से हँसकर कहा (उस समय उनके मन में किसी प्रकार का अभिमान या आश्चर्य नहीं था) कि कि वे लोग डरें नहीं ; उनका आतिथ्य स्वीकार करें । अभी वहीं ठहरें और उनका आश्रम सूना न करें । नर-नारायण ऋषि के इस अभयदान को [redacted] सुनकर कामदेव आदि के सिर लज्जा से झुक गये और वे भगवान् नर-नारायण की स्तुति करने लगे । इसके पश्चात् सर्वशक्तिमान् भगवान् ने अपने योगबल से उनके समक्ष बहुत सी ऐसी अप्सराएँ प्रकट करके दिखलायीं, जो अद्भुत रूप-लावण्य से सम्पन्न और विचित्र वस्त्रालंकारों से सुसज्जित थीं तथा भगवान् की सेवा कर रही थीं । जब देवराज इन्द्र के अनुचरों ने उन लक्ष्मीजी के समान रूपवतियों को देखा, तब उनके महान् सौंदर्य के सामने उनका मुख मलीन हो गया, वे श्रीहीन होकर उनके शरीर से निकलने वाली दिव्य सुगन्ध से मोहित हो गये । अब उनका सिर झुक गया । देवेश भगवान् नारायण ने हँसते हुए उनसे उनमें से किसी एक को ग्रहण करने के लिये कहा, जो उनके स्वर्गलोक की शोभा बढ़ाने वाली होगी । देवराज के अनुचरों ने उनके आदेश को स्वीकार कर उन्हें नमस्कार किया । फिर उनके द्वारा बनायी हुई स्त्रियों में से श्रेष्ठ अप्सरा उर्वशी को आगे करके स्वर्गलोक को चले गये । वहाँ पहुँचकर उन्होंने इन्द्र को नमस्कार किया और भरी सभा में देवताओं के समक्ष भगवान् नर-नारायण के बल और प्रभाव का वर्णन किया । उसे सुनकर देवराज इन्द्र अत्यन्त भयभीत और चकित हो गया ।

इसी ईर्ष्या के कारण उसने विश्वामित्र[१] की तपस्या को भी भंग किया [redacted] था ।

---

१- डॉ० श्यामसुन्दरदास (मूल सम्पादक): हिंदी शब्दसागर, खंड ६, पृ०४५५२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## इन्द्र द्वारा ब्रह्महत्या [redacted] एवं पदच्युत होना-

इसी संशय एवं भय के कारण इन्द्र ने त्रिशिरा का वध कर दिया था। तत्पश्चात् उसे वृत्रासुर को भी मारना पड़ा। इस कारण उसे ब्रह्महत्या लगी [redacted] और [redacted] इन्द्र पद से भी च्युत होना पड़ा। उसके पद पर नहुष को अभिषिक्त किया गया, किन्तु नहुष भी अपने कुकर्म के कारण पदच्युत हुआ। इसके बाद इन्द्र अपने ब्रह्महत्या के पातक को दूर कर पुन: देवराज पद पर अभिषिक्त हुआ। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित कथा उल्लेखनीय है—

### इन्द्र द्वारा त्रिशिरा एवं वृत्रासुर का वध, ब्रह्महत्या के प्रभाव से पदच्युत होना एवं उसकी शुद्धि तथा पुन: पद की प्राप्ति

देवताओं के प्रसिद्ध प्रजापति त्वष्टा थे। ये श्रेष्ठ और महान् तपस्वी माने जाते थे। कहते हैं, उन्होंने इन्द्र के प्रति द्रोहबुद्धि हो जाने के कारण एक तीन सिर वाला पुत्र उत्पन्न किया। उस महातेजस्वी बालक का नाम 'विश्वरूप' था। वह सूर्य, चन्द्रमा तथा अग्नि के समान तेजस्वी एवं भयंकर अपने उन तीनों मुखों द्वारा इन्द्र का स्थान पाने की प्रार्थना करता था। त्वष्टा का वह पुत्र कोमल स्वभाव वाला, तपस्वी, जितेन्द्रिय तथा धर्म और तपस्या के लिए सदा उद्यत रहने वाला था। उसका तीव्र तप दूसरों के लिए दुष्कर था। उस अमिततेजस्वी बालक का तपोबल तथा सत्य देखकर इन्द्र बहुत दु:खी हुआ। वह सोचने लगा कि कहीं यह इन्द्र न हो जाय। इस तरह सोच-विचार कर बुद्धिमान् इन्द्र ने उसके तप को भंग करने के लिए अप्सराओं को भेजा किन्तु त्रिशिरा उससे विचलित न हो सका। अन्त में इन्द्र ने अपने वज्र से उसका वध कर दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


त्रिशिरा के वध से क्षुब्ध त्वष्टा ने देवेन्द्र के विनाश के लिए अग्नि में आहुति देकर घोर रूप वाले वृत्रासुर को उत्पन्न किया। तदनन्तर वृत्रासुर और इन्द्र में घोर युद्ध हुआ। वृत्रासुर त्वष्टा के तेज और बल से व्याप्त हो जब युद्ध में अधिक बलशाली हो बढ़ने लगा, तब इन्द्र युद्ध से विमुख हो गया। इससे देवताओं को बहुत दुःख हुआ और वे ऋषियों के साथ भगवान् विष्णु की शरण में गये। भगवान् विष्णु ने उन्हें वृत्रासुर से सन्धि करने की सलाह दी और कहा कि इन्द्र की विजय उनके (विष्णु के) तेज से ही होगी। वे अदृश्य रूप में इन्द्र के वज्र में प्रवेश करेंगे। ऋषियों ने विष्णु की सलाह के अनुसार वृत्रासुर से सन्धि करने को कहा। उसने इस शर्त पर सन्धि की कि वह न सूखी वस्तु से, न गीली वस्तु से, न पत्थर से, न लकड़ी से, न शस्त्र से, न अस्त्र से, न दिन में, न रात में इन्द्र द्वारा मारा जाये। इन्द्र भी हर्ष में भरकर सदा उससे मिलने लगा, परन्तु वह उसके वध सम्बन्धी उपायों को ही सोचता रहता था। एक दिन संध्या काल में उस महान् असुर को समुद्र तट पर देखकर इन्द्र ने भगवान् विष्णु का स्मरण कर समुद्र के फेन से उसे नष्ट कर दिया।

महापराक्रमी वृत्रासुर के मारे जाने पर विश्वासघात रूपी असत्य से अभिभूत होकर इन्द्र मन ही मन बहुत दुःखी हो गया। त्रिशिरा के वध से उत्पन्न हुई ब्रह्महत्या के पातक ने उसे पहले से ही घेर रखा था। वह सम्पूर्ण लोकों की अन्तिम सीमा पर जाकर बेसुध और अचेत होकर रहने लगा। वहाँ अपने ही पापों से पीड़ित हुए देवेन्द्र का किसी को पता न चला। वह जल में विचरने वाले सर्प की भाँति पानी में ही छिपकर रहने लगा। उसके पद पर नहुष को अभिषिक्त किया गया। देवराज के साम्राज्य को प्राप्त करने के पश्चात् नहुष ने शची को भी अधिकृत करना चाहा। भयभीत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



इन्द्राणी देवाचार्य बृहस्पति की शरण में गयी। उन्होंने ने उसे अभयदान दिया। वह गुरु बृहस्पति के ही भवन में निवास करने लगी। इस पर नहुष बहुत क्रोधित हुए। उनके क्रोध को देखकर देवतागण ऋषियों को आगे करके उनके पास गये और उन्हें समझाया। किन्तु वे न माने। अन्त में देवतागण बृहस्पति के पास गये और उनसे वह उपाय पूछा जिससे शुभ परिणाम हो। देवगुरु ने शुभलक्षणा शची देवी को नहुष से कुछ समय की अवधि मांगने की सलाह दी। शची संकोच के साथ नहुष के पास गयी और उनसे कुछ समय की अवधि मांगी। नहुष ने प्रसन्नतापूर्वक उनकी बात मान ली। इसके पश्चात् देवगण भगवान् विष्णु की शरण में गये और उन्हें सारा वृत्तान्त सुनाया। भगवान् विष्णु ने कहा कि यदि इन्द्र यज्ञों द्वारा उनकी आराधना करें तो वे उसे पवित्र कर देंगे।

भगवान् विष्णु की यह शुभ मधुरवाणी सुनकर गुरु एवं महर्षियों सहित सभी देवता इन्द्र के पास गये। वहाँ महेन्द्र की शुद्धि के लिए एक महान् अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान हुआ जो ब्रह्महत्या के पातक को दूर करने वाला था। समस्त भूतों में ब्रह्महत्या का विभाजन करके देवेश्वर इन्द्र ने उसे त्याग दिया और स्वयं मन को वश में करके वह निष्पाप तथा निश्चित हो गया। किन्तु जब वह स्वर्गलोक में आया तो वहाँ नहुष को देखकर पुन: अदृश्य हो गया और अनुकूल स्थिति की प्रतीक्षा करने लगा। शची पुन: शोक में डूब गयी। उसने रात्रि देवी की उपासना की और उनका आह्वान किया। उनसे शची ने अपने को देवराज के पास ले जाने का अनुरोध किया। रात्रि देवी के साथ इन्द्राणी ने एक सरोवर के उस कमलनाल में प्रवेश किया जिसमें सूक्ष्म रूपधारी शतक्रतु इन्द्र छिपा था। अत: उपश्रुति (रात्रि देवी) तथा इन्द्राणी ने भी सूक्ष्म रूप धारण कर लिया था। इन्द्र ने शची को बताया कि वह नहुष से कहे कि यदि वे ऋषियान पर बैठ कर उसके पास आयेंगे तो वह उनके वश में होगी। इन्द्राणी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh 

ने ऐसा ही किया। नहुष ने प्रसन्न होकर सप्तर्षियों और ब्रह्मर्षियों को (उनके अपमान की चिन्ता किये बिना) अपना वाहन बनाया। देवर्षि एवं ब्रह्मर्षि शिथिल हो गये थे। उन्होंने नहुष से पूछा कि वे वेद मन्त्रों को प्रामाणिक मानते हैं या नहीं। नहुष ने उसे अप्रामाणिक बताया और इस सम्बन्ध में विवाद करते हुए अपने पैर से अगस्त्य मुनि के सिर पर प्रहार कर दिया। इससे रुष्ट होकर उन्होंने उन्हें स्वर्ग से भ्रष्ट होकर पृथ्वी पर गिरने और दस हजार वर्षों तक महान् सर्प का रूप धारण कर विचरण करने का शाप दे दिया, जिसके प्रभाव से वे स्वर्गच्युत हो गये। इसके बाद पूर्वेन्द्र को पुनः अपने पद पर अभिषिक्त किया गया।[1]

इसीप्रकार नमुचि की हत्या करके भी इन्द्र ब्रह्महत्या के पाप का भागी हुआ था।

इन्द्र द्वारा नमुचि का वध तथा अरुणा के जल में स्नान कर ब्रह्महत्या जनित पाप से मुक्ति-

एक समय नमुचि इन्द्र के भय से सूर्य की किरणों में समा गया था। तब इन्द्र ने उसके साथ मित्रता कर ली और प्रतिज्ञा की कि वे उसे न दिन में मारेंगे, न रात में तथा न गीले हथियार से मारेंगे, न सूखे से। किन्तु चारों ओर कुहासा छाया हुआ देखकर इन्द्र ने जल के फेन से नमुचि का सिर काट दिया। इसके पश्चात् नमुचि का वह कटा हुआ सिर इन्द्र के पास जाकर बारम्बार इस प्रकार कहने लगा, "ओ मित्रघाती पापात्मा शक्र! तू कहाँ जाता है।" इस प्रश्न से संतप्त इन्द्र ब्रह्मा की शरण में गया। उन्होंने इसको अरुणा तीर्थ में विधिपूर्वक यज्ञ करने एवं अरुणा के जल में स्नान करने की सलाह दी। इन्द्र ने ऐसा ही किया और ब्रह्महत्या जनित पाप से मुक्त हो सहर्ष अपने स्वर्ग को चला गया।[2]

---

१- महाभारत, उद्योगपर्व, नवाँ अध्याय-अट्ठारवाँ अध्याय।

२- वही, शल्यपर्व, तैतालिसवाँ अध्याय।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


१२०१

इन्द्र का ब्रह्महत्या के कारण निस्तेज होना और उन तेजों से पाण्डवों की उत्पत्ति-

मारकण्डेय पुराण के अन्तर्गत इन्द्र का ब्रह्महत्या के कारण निस्तेज हो जाने और उन तेजों का उनके पांच रूपों में प्रकट होने की कथा मिलती है। एक समय प्रजापति त्वष्टा का पुत्र त्रिशिरा अधोमुख होकर तप कर रहा था। उसके तप के डर से इन्द्र ने उसकी हत्या कर दी। इस ब्रह्महत्या से उत्पन्न पातक से इन्द्र का तेज नष्ट हो गया और वह धर्म में प्रवेश कर गया। त्रिशिरा की मृत्यु पर त्वष्टा अत्यंत क्रोधित हुए उन्होंने क्रोध के वशीभूत होकर अपने सिर की एक जटा अग्नि में होम कर दी। इससे वृत्र नामक एक घोर असुर अग्नि से प्रकट हुआ। अपने वध के लिए उस घोर असुर को उत्पन्न देखकर इन्द्र भयभीत हो उठा। इस उद्देश्य से उन्होंने मरीच्यादि सप्तर्षियों को उसके पास भेजकर संधि कर ली। किंतु प्रतिज्ञा की मर्यादा का उल्लंघन करके वृत्रासुर इन्द्र के द्वारा मारा गया। इस ब्रह्महत्या से उत्पन्न पाप के कारण इन्द्र का तेज समाप्त हो गया और वह सर्वव्यापी एवं अव्यक्त पवनदेव में प्रविष्ट हो गया।

इसके अतिरिक्त जब इन्द्र ने अहिल्या का सतीत्व नष्ट किया तब भी वह श्रीहीन हो गया था। उस समय दुरात्मा इन्द्र के अंग-प्रत्यंग का संपूर्ण लावण्य उसका त्याग करके दोनों अश्विनीकुमारों में प्रवेश कर गया।

इस समय उसको बलहीन समझकर दैत्यों ने उस पर विजय प्राप्त करने की इच्छा से बल वीर्य एवं मदयुक्त राजाओं के वंश में जन्म लेना प्रारंभ किया। कुछ समय व्यतीत होने पर पृथ्वी दैत्यों के भार से बोझिल हो गयी। उसने देवताओं से अपनी शांति के लिए प्रार्थना की। इसपर देवों ने अपने-अपने तेजांश से भूमण्डल पर जन्म लिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



तब इन्द्र के शरीर से उत्पन्न उस तेज को धर्म और श्रेष्ठ वायु ने कुन्ती के गर्भ से तेजस्वी राजा युधिष्ठिर और भीम के रूप में उत्पन्न किया। इन्द्र के आधे बल से कुन्ती से ही अर्जुन का जन्म हुआ तथा इन्द्र के लावण्य को धारण करने वाले दोनों अश्विनीकुमारों ने माद्री के गर्भ से जन्म लिया। इस प्रकार इन्द्र ही पांच पाण्डव के रूप में उत्पन्न हुए और द्रौपदी के पति के रूप में पंचेन्द्र कहलाये।[1]

इन्द्र के अपदस्थ होने की एक दूसरी कथा भी प्राप्त होती है। एक बार देवासुर संग्राम में इन्द्रादि देवताओं ने महाराजा रजि से दानवों के संहार के लिए आग्रह किया। इस पर राजा ने कहा कि दैत्यों के संहार के पश्चात् यदि वे धर्मत: इन्द्र बना दिये जायें तो देवता के पक्ष से असुरों को नष्ट करेंगे। देवता इस पर तैयार हो गये। दैत्यों के संहार के पश्चात् देवताओं सहित इन्द्र उनसे अनुगृहीत हुए और स्वयं को उनका पुत्र समझा। किन्तु महाराजा रजि माया से वंचित हो ब्रह्मलोक को चले गये। इसके बाद लोकव्यवहार के अनुसार रजिपुत्रों ने इन्द्र का राज्य ले लिया और इन्द्र पदच्युत हो गये। कुछ समय पश्चात् बृहस्पति की कृपा से उसने पुन: अपने पद को प्राप्त किया।[2]

इसी तरह बलि ने भी इस पर विजय प्राप्त कर इसे पदच्युत कर दिया था।[3]

इन्द्र का ब्राह्मणवेष में प्रह्लाद से राज्य प्राप्त करना -

दैत्यराज प्रह्लाद ने भी एक बार इन्द्र का राज्य हर लिया था, जिसे इन्द्र ने अपनी चतुराई से पुन: प्राप्त किया था।

---

१- मारकण्डेय पुराण, प्रथम खण्ड, पृ० १०४। द्वीपान्तर में भी अर्जुन इन्द्रपुत्र माने जाते हैं। देखिए पृ० १०३।
२- हरिवंश पुराण, हरिवंशपर्व, अ० २८।
३- वही, भविष्यपर्व, अ० ६४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



कहा जाता है कि दैत्यराज प्रह्लाद ने शील का आश्रय लेकर महामना महेन्द्र का राज्य हर लिया और तीनों लोकों को अपने वश में कर लिया। तब बुद्धिमान् इन्द्र हाथ जोड़कर बृहस्पति की सेवा में उपस्थित हुआ तथा उनसे अपने कल्याण का उपाय पूछा। बृहस्पति ने देवेन्द्र को कल्याणकारी परम ज्ञान का उपदेश दिया। इन्द्र ने उनसे पुन: इससे भी विशेष वस्तु के सम्बन्ध में पूछा। इसके लिए बृहस्पति ने उसे शुक्राचार्य के पास भेजा। परम तेजस्वी महातपस्वी इन्द्र ने प्रसन्नतापूर्वक शुक्राचार्य से पुन: अपने लिए श्रेय का ज्ञान प्राप्त किया और इनसे भी विशेष श्रेय को जानना चाहा। शुक्राचार्य ने उसे प्रह्लाद के पास भेजा क्योंकि उन्हें विशेष श्रेय का ज्ञान था। तदनन्तर इन्द्र ब्राह्मण रूप धारण करके प्रह्लाद के पास गये। उन्होंने शुभ समय में इसे ज्ञान का तत्त्व प्रदान किया। ब्राह्मण ने भी उनके प्रति यथायोग्य परम उत्तम गुरुभक्तिपूर्ण व्यवहार किया तथा उनकी रुचि के अनुसार सब प्रकार से उनकी सेवा की। प्रह्लाद से बारम्बार उन्हें त्रिलोकी के उत्तम राज्य प्राप्त होने के कारण को ब्राह्मण के पूछने पर उन्होंने उसे उस विशेष श्रेय को भी बतलाया जिसका वे स्वयं पालन करते थे। इसके पश्चात् भी वह ब्राह्मण उनकी सेवा-शुश्रूषा करता रहा। इससे प्रसन्न होकर प्रह्लाद ने उसे वर मांगने के लिए बाध्य किया। इस पर ब्राह्मण ने कहा—

"यदि राजन् प्रसन्नस्त्वं मम चेदिच्छसि प्रियम्।
भवत: शीलमिच्छामि प्राप्तुमेष वरो मम॥"

अर्थात् राजन्! यदि आप प्रसन्न हैं और मेरा प्रिय करना चाहते हैं तो मुझे आपका ही शील प्राप्त करने की इच्छा है, यही मेरा वर है।

यह सुनकर दैत्यराज प्रह्लाद प्रसन्न तो हुए, परन्तु उनके मन में भय व्याप्त हो गया। ब्राह्मण के वर मांगने पर वे सोचने लगे कि यह कोई साधारण तेज वाला पुरुष नहीं है। फिर भी 'एवमस्तु' कह कर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



प्रह्लाद ने वह वर दे दिया । उस समय उन्हें बड़ा विस्मय हो रहा था । ब्राह्मण को वर देकर वे दु:खी हो गये । अभी वे चिन्ता कर ही रहे थे कि उनके शरीर से क्रमश: पाँच कान्तिमान् छायामय तेज मूर्तिमान् प्रकट हुए जो शील, धर्म, सत्य, सदाचार और बल थे । प्रह्लाद के पूछने पर उन विशालकाय महातेजस्वी पुरुषों ने उन्हें बताया कि वे श्रेष्ठ ब्राह्मण के पास जा रहे हैं, क्योंकि उन्होंने (प्रह्लाद ने) उन्हें त्याग दिया था । इसके पश्चात् प्रह्लाद के शरीर से एक प्रभामयी देवी प्रकट हुई । दैत्यराज के पूछने पर उन्होंने बताया कि वे लक्ष्मी हैं और उनके द्वारा त्याग दिये जाने पर वे बल की अनुगामिनी हो उस ब्राह्मण के पास जा रही हैं । प्रह्लाद ने उस ब्राह्मण के सम्बन्ध में जानना चाहा तो उन्होंने बताया कि वे ब्रह्मचारी ब्राह्मण साक्षात् इन्द्र थे जिन्होंने उनके तीनों लोकों में फैले हुए ऐश्वर्य को हर लिया तथा उनके शील का अपहरण कर लिया ।

इस प्रकार धर्म, सत्य, सदाचार, बल और लक्ष्मी, जो सदा शील के आधार पर रहते हैं, सभी उस ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र में प्रविष्ट हो गये और इन्द्र ने पुन: अपना राज्य प्राप्त किया ।[१]

इन्द्र द्वारा अहंकार के कारण दूसरों का अपमान-

इन्द्र को त्रिलोकी का ऐश्वर्य पाकर बहुत अहंकार भी हो जाता था । इससे वह धर्ममर्यादा एवं सदाचार का भी उल्लंघन कर जाता था । इस कारण कभी-कभी उसे कठिनाइयों का भी सामना करना पड़ता था । इस सम्बन्ध में अनेक कथाएँ मिलती हैं ।

१- महाभारत, शान्तिपर्व, एक सौ चौबीसवाँ अध्याय ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


इन्द्र और बृहस्पति की कथा-[1]

एक बार इन्द्र अपनी पत्नी शची के साथ सभा में ऊँचे सिंहासन पर बैठा था और वहाँ दिव्य समाज में वह अत्यन्त सुशोभित हो रहा था। इसी समय देवताओं के आचार्य बृहस्पति वहाँ आये, जिन्हें सुर-असुर सभी नमस्कार करते थे। इन्द्र ने उनको देखा किन्तु वह न खड़ा हुआ, न आसन आदि देकर गुरुसत्कार किया और न उन्हें प्रणाम ही किया। त्रिकालदर्शी समर्थ बृहस्पति जी उनके ऐश्वर्यमद को देखकर तुरन्त वहाँ से चले आये और अन्तर्धान हो गये। इसप्रकार उन्होंने इन्द्रादि देवताओं का परित्याग कर दिया।

इन्द्र और दुर्वासा ऋषि-[2]

इन्द्र को घमण्ड के कारण ही दुर्वासा ऋषि के शाप से ग्रस्त होना पड़ा था। एक समय दुर्वासा ऋषि एक विद्याधरी से पुष्पमाला प्राप्त कर विचर रहे थे। इसी समय उन्होंने उन्मत्त ऐरावत पर आते हुए इन्द्र को देखा। उसे देखकर मुनिवर ने माला उसके ऊपर फैंक दी। किन्तु देवेन्द्र ने उसे ऐरावत के मस्तक पर डाल दिया। उस गज ने भी उसकी गन्ध से विकर्षित हो उसे सूँड़ से पकड़ पृथ्वी पर फैंक दिया। यह देखकर दुर्वासा ऋषि ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर शीघ्र ही उसके त्रिभुवन को श्रीहीन हो जाने का शाप दे दिया--

"मद्दत्ता भवता यस्मात्क्षिप्ता माला महीतले।
तस्मात्प्रणष्टलक्ष्मीकं त्रैलोक्यं ते भविष्यति।।" अतः इन्द्र शीघ्र ही श्रीहीन हो गया। इसके बाद उसे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। दैत्यों ने भी इसी समय आक्रमण किया। अन्त में समुद्रमन्थन से उसे पुनः श्री प्राप्त हुई। इसप्रकार इन्द्र का गर्व सदैव चूर्ण हुआ। इन्द्र द्वारा

---

१- श्रीमद्भागवत ६।७।

२- विष्णुपुराण १।६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



बालखिल्य ऋषियों के अपमान की कथा भी इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है। किन्तु कश्यप की कृपा से उनलोगों ने पक्षिराज गरुड़ की उत्पत्ति की जिससे मित्रता करके इन्द्र ने अमृत की प्राप्ति की थी।

इन्द्र द्वारा बालखिल्यों का अपमान, गरुड़ की उत्पत्ति, गरुड़ का अमृत लेकर लौटना, उनपर इन्द्र के द्वारा वज्र-प्रहार, इन्द्र और गरुड़ की मित्रता तथा इन्द्र द्वारा अमृतका अपहरण- एक समय प्रजापति कश्यप पुत्र की कामना से यज्ञ कर रहे थे; उसमें ऋषियों, देवताओं और गन्धर्वों ने भी उनकी बहुत सहायता की। कश्यप ने इन्द्रादि देवताओं एवं ऋषियों-मुनियों को जंगल से समिधा लाने के लिए नियुक्त किया था। इन्द्र अधिक शक्तिशाली था। अतः उसने अपने बल के अनुसार लकड़ी का बड़ा बोझ उठा लिया और बिना कष्ट के ले आया। रास्ते में उसने बहुत से ऐसे ऋषियों को देखा, जो कद में अंगूठे के मध्य भाग के बराबर थे। वे सब मिलकर पलाश की एक डाली लिये जा रहे थे। उन्हें जल से भरा गोखुर भी लांघना बहुत कष्ट-साध्य था। अपने बल के गर्व में मतवाले इन्द्र ने आश्चर्यचकित होकर उन सबको देखा और हँसी उड़ाते हुए अपमानपूर्वक उन्हें लांघ कर शीघ्रता के साथ आगे बढ़ गया। बाल्यखिल्य ऋषियों को उसके इस व्यवहार पर बहुत रोष हुआ और उनलोगों ने उस समय देवता के लिए एक दूसरा इन्द्र, जो उस इन्द्र से प्रत्येक बात में सौ गुना शक्तिशाली हो, उत्पन्न करने के लिए यज्ञ प्रारम्भ किया/ इससे देवराज इन्द्र को बड़ा सन्ताप हुआ और वह कश्यप की शरण में गया। उनके समझाने पर यह निश्चय हुआ कि भावी पुत्र पक्षियों का इन्द्र होगा, जो अत्यन्त बलशाली और सत्त्वगुण से सम्पन्न होगा। तदनुसार विनता देवी से दो पुत्र गरुड़ और अरुण नाम से उत्पन्न हुए जो महान् पराक्रमी हुए। गरुड़ ने सम्पूर्ण पक्षियों के इन्द्र पद का उपभोग किया। स्वरूप से पक्षी होते हुए भी वह इच्छानुसार रूप धारण करने में समर्थ था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


गरुड़ जब अपनी माता विनता को कद्रू की दासता से मुक्त करने के लिए उनके पुत्रों (सर्पों) की माँग के अनुसार अमृत लाने के लिए चला तो उसका देवताओं से भयंकर युद्ध हुआ जिसमें देवता हार कर भाग गये। जब वह अमृत कलश के पास पहुँचा तो उसने देखा कि एक लोहे का भयंकर चक्र कलश के चारों ओर घूम रहा है और दो सर्प उसकी रक्षा कर रहे हैं। गरुड़ चक्र और सर्पों को नष्ट कर कलश लेकर चल दिया। उसने स्वयं अमृतपान नहीं किया। रास्ते में भगवान् विष्णु की उससे भेंट हो गयी। भगवान् नारायण ने गरुड़ को दो वरदान दिये और गरुड़ ने भी उनको वरदान दिया। पक्षिराज गरुड़ वहाँ से बड़े वेगपूर्वक चला। मार्ग में अमृत अपहरण करके ले जाते देख इन्द्र ने उससे युद्ध किया। इन्द्र के वज्र का उस पर कोई प्रभाव न पड़ा। वज्र की प्रतिष्ठा रखने के लिए गरुड़ ने अपना एक पंख गिरा दिया। उसका यह प्रभाव देख कर इन्द्र ने गरुड़ से मित्रता कर ली। उसने गरुड़ से कहा कि उसे तो अमृत की आवश्यकता है नहीं। जिसके लिए वह ले जा रहा है, वे पीकर उसे अपार कष्ट देंगे। अतएव यह अमृत वह उसे दे दे। गरुड़ ने उससे बताया कि वह उसे किसी को पीने के लिए नहीं ले जारहा है वरन् किसी अन्य कारणवश उसे ले जा रहा है। उसने इन्द्र से यह भी कहा कि वह उस अमृतकलश को जहाँ रख दे, वहीं से वह (इन्द्र) उसका अपहरण कर ले। इन्द्र ने यह स्वीकार कर लिया। तब गरुड़ के यह वरदान माँगने पर कि सर्प उनका भोजन हों, इन्द्र ने 'तथास्तु' कहकर स्वीकार किया और हरि के पास चला गया। गरुड़ ने अपनी माता के यहाँ पहुँचकर सर्पों से कहा कि अब तो उनकी माँग के अनुसार वह अमृत ले आया। अत: वे उसकी (गरुड़ की) माँ विनता को मुक्त कर दें। सर्पों ने 'तथास्तु' कहा। इसके अतिरिक्त वे गरुड़ के कहने के अनुसार स्नान और मंगल कर्म करने चले गये। तब उनके लौटने के पूर्व ही इन्द्र अमृत का अपहरण करके स्वर्गलोक को चला गया।[१]

---

१- महाभारत, आदिपर्व, इकतीसवाँ, बत्तीसवाँ अध्याय।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh 

महाभारत एवं पुराणों में इन्द्र की सुखवादी प्रवृत्ति एवं विलासी जीवन का दर्शन होता है। इस कारण वह सतीत्त्व का हरण करने से भी न चूकता था। वह मुनि देवशर्मा की पत्नी [redacted] के सतीत्त्व को नष्ट करने के उद्देश्य से दिव्य रूप धारण कर पहुँचा था किन्तु मुनि के शिष्य विपुल ने उसकी रक्षा की तथा इन्द्र को खूब फटकारा, जिससे इन्द्र लज्जित होकर अन्तर्धान हो गया।[१]

देवेन्द्र का कोप-

देवराज की पूजा के स्थान पर यदि कोई अन्य देवताओं की पूजा करने लगता तो उसे देवेन्द्र के कोप का भाजन बनना पड़ता था। एक बार नन्दादि गोपों ने कृष्ण की आज्ञा से इन्द्र-यज्ञ न करके गोवर्धनपर्वत की पूजा की। इसपर सुरेन्द्र कुपित हो गया। उसकी आज्ञा से मेघों ने वृन्दावन को प्रचण्ड वायु और वर्षा से आक्रान्त कर डाला। इससे सम्पूर्ण वृन्दावन जलमय हो गया। पृथ्वी, दिशाएँ-और आकाश सभी एक रूप हो गये। अत: ग्वाल एवं गौओं के प्रार्थना करने पर भगवान् श्रीकृष्ण ने गोवर्धनपर्वत को अपनी अंगुली पर धारण किया और वृन्दावन की रक्षा की। इसप्रकार इन्द्र का मानमर्दन हुआ। अपनी प्रतिज्ञा को भंग होते देखकर उसने मेघों को रोक दिया। कृष्ण ने गोवर्धन को अपने स्थान पर रख दिया इसके पश्चात् देवराज अपने ऐरावत पर चढ़कर पर्वत पर आया। वहाँ श्रीकृष्ण को गौएँ चराते देख उनकी स्तुति की, तत्पश्चात् उसने भगवान् श्रीकृष्ण को उपेन्द्रपद पर अभिषिक्त किया। [redacted] कृष्ण गौओं के स्वामी [redacted] थे, इसलिए उनको 'गोविन्द' नाम से विभूषित किया।[२]

---

१- महाभारत, अनुशासनपर्व, इकतालिसवाँ अध्याय।

२- विष्णुपुराण ५।१०,११,१२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


इन्द्र देवताओं का सम्राट् होने के साथ-साथ सेनापति भी था । अनेक युद्धों में इसने अपने शौर्य बल को प्रदर्शित किया । इसी पराक्रम से उसने अनेक दैत्यों को नष्ट करके इन्द्र पद को प्राप्त किया था । इस सम्बन्ध में इन्द्र और अम्बरीष का संवाद उल्लेखनीय है--

इन्द्र और अम्बरीष का संवाद-

नाभाग-पुत्र अम्बरीष ने अत्यन्त दुर्लभ स्वर्गलोक में जाकर देखा कि उनका सेनापति सुदेव देवलोक में इन्द्र के साथ विराजमान है । वह सम्पूर्णत: तेजस्वी, दिव्य एवं श्रेष्ठ विमान पर बैठकर ऊपर-ऊपर चला जा रहा था । अपने शक्तिशाली सेनापति को अपने से भी ऊपर होकर जाते देख सुदेव की उस समृद्धि का प्रत्यक्ष दर्शन करके उदारबुद्धि राजा अम्बरीष आश्चर्य से चकित हो उठे और इन्द्र देव से बोले, " देवराज, मैं समुद्र पर्यन्त सम्पूर्ण पृथ्वी का विधिपूर्वक शासन और संरक्षण करता था । शास्त्र की आज्ञा के अनुसार धर्म की कामना से चारों वर्णों के पालन में तत्पर रहता था । मैंने घोर ब्रह्मचर्य का पालन करके गुरु के बताये हुए आचार और गुरु की सेवा के द्वारा धर्मपूर्वक वेदों का अध्ययन किया तथा राजशास्त्र की विशेष शिक्षा प्राप्त की । सदा ही अन्नपान देकर अतिथियों का, श्राद्धकर्म करके पितरों का, स्वाध्याय की दीक्षा लेकर ऋषियों का तथा उत्तमोत्तम यज्ञों का अनुष्ठान करके देवताओं का पूजन किया । देवेन्द्र ! मैं शास्त्रोक्त विधि के अनुसार क्षात्र धर्म में स्थित होकर सेना की देख-भाल करता और युद्ध में शत्रुओं पर विजय पाता था । यह सुदेव पहले मेरा सेनापति था । शान्त स्वभाव का एक सैनिक था, फिर यह मुझसे आगे कैसे जा रहा है ? इसने न तो बड़े-बड़े यज्ञ किये और न विधिपूर्वक ब्राह्मणों को ही तृप्त किया । वही यह सुदेव आज मुझसे ऊपर जा रहा है । इसे ऐसा ऐश्वर्य कहाँ से प्राप्त हो गया, जो सम्पूर्ण देवताओं के लिए भी अत्यन्त दुर्लभ है ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



1881

इसपर इन्द्र ने उन्हें बतलाया कि पूर्वकाल में जब वे (अम्बरीष) धर्म के अनुसार इस पृथ्वी का पालन कर रहे थे, उस समय सुदेव ने जो पराक्रम किया था, उसे उन्होंने प्रत्यक्ष देखा था। जो योद्धा शत्रु के सेनापति का वध करके उसके रथ पर आरूढ़ हो जाता है, वह भगवान् विष्णु के समान पराक्रमी, बृहस्पति के समान बुद्धिमान् तथा शक्तिशाली वीर समझा जाता है। जो शत्रु के सेनापति, उसके पुत्र अथवा उसके पक्ष के किसी भी सम्मानित वीर को जीते जी पकड़ लेता है, उसको मेरे जैसे लोक प्राप्त होते हैं। युद्ध स्थल में मारे गये शूरवीर के लिए किसी प्रकार भी शोक नहीं करना चाहिए। वह मारा गया शूरवीर स्वर्ग लोक में प्रतिष्ठित होता है, अत: कदापि शोचनीय नहीं है। जो युद्धधर्म का निरन्तर पालन करता है उसके लिए यही तपस्या, पुण्य, सनातनधर्म तथा चारों आश्रमों के नियमों का पालन है।

अन्त में उसने बतलाया कि वह स्वयं जम्भ, वृत्रासुर, बलासुर, पाकासुर, सैकड़ों माया जानने वाले विरोचन, दुर्जय वीर नमुचि, विविधमायाविशारद शम्बरासुर दैत्यवंशी विप्रचित्ति, सम्पूर्ण दानवदल तथा प्रह्लाद को भी युद्ध में मार कर देवराज के पद पर प्रतिष्ठित हुआ है। इन्द्र का यह वचन सुनकर राजा अम्बरीष ने मन ही मन इसे स्वीकार किया कि योद्धाओं को स्वत: सिद्धि प्राप्त होती है।[१]

पर्वतों के पंख-छेदन की कथा-[२]

वेदों के अतिरिक्त पौराणिक साहित्य में भी मिलती है। इन्द्र ने सभी पर्वतों को स्थिर करने के लिए अपने सौ पर्व वाले वज्र से उनके पक्षों को काट दिया था। केवल मैनाक पर्वत ही उसके वज्र के प्रभाव से बच गया था, क्योंकि वह समुद्र में स्थित था।

---

१- महाभारत, अट्ठानबेवाँ अध्याय। (शान्तिपर्व)। [redacted] -

२- हरिवंशपुराण, भविष्यपर्व, अ० ४०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh 

१४०१

इन्द्र द्वारा मार्गदर्शन-

महाभारत एवं अन्य पौराणिक साहित्य में इन्द्र के उदार रूप का भी दर्शन होता है। उसने अनुचित मार्ग पर जाने वाले अनेक लोगों को उचित मार्ग ग्रहण करने एवं धर्मपालन की ओर प्रवृत्त किया। इस सम्बन्ध में अनेक कथाएँ मिलती हैं जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं।

इन्द्र द्वारा ब्राह्मण बालक को उचित मार्ग-दर्शन-

एक समय कुछ मन्दबुद्धि, कुलीन ब्राह्मण बालक घर छोड़कर वन में चले गये। यद्यपि वे धनी थे, तथापि भाई-बन्धु और माता-पिता को छोड़कर इसी को धर्म मानते हुए वन में आकर ब्रह्मचर्य का पालन करने लगे। उन्हें अल्पावस्था में ही गृहस्थ धर्म त्यागते हुए देख कर एक दिन भगवान् इन्द्र सुवर्णमय पक्षी का रूप धारण करके वहाँ आये और उन्हें उचित मार्ग पर ले जाने के लिए गृहस्थ धर्म को तपस्या में श्रेष्ठ कर्म बताते हुए गृहस्थ धर्म का उपदेश दिया जिसके प्रभाव से वे सभी ब्राह्मण बालक पुनः अपने घर लौट गये।[१]

इन्द्र द्वारा ऋषिकुमार काश्यप को आत्महत्यादि पापकर्म से निवृत्ति एवं धर्मपालन का उपदेश-

इसी प्रकार एक समय धन के गर्व से मतवाले किसी धनी वैश्य ने कठोर व्रत का पालन करने वाले तपस्वी ऋषिकुमार काश्यप को अपने रथ से धक्का देकर गिरा दिया। वे पीड़ा से कराह कर गिर पड़े और आत्महत्या के लिए उद्यत हो गये। उन्हें इसप्रकार मरने की इच्छा लेकर बैठे मूर्छा से अचेत हो कुछ न बोलते और मन में धन की अभिलाषा करते देखकर इन्द्रदेव शृगाल का रूप धारण करके उनके पास आया और उन्हें सद्बुद्धि का आश्रय लेकर आत्महत्यादि पापकर्म से निवृत्त होने और धर्मपालन के निमित्त उठ खड़े होने के लिए अनेक प्रकार से उपदेश दिया। यह सुनकर काश्यप भी चकित हो गये और अपनी ज्ञानदृष्टि से देखा तो उन्हें उस रूप में देवदेव ~~सम्पत्ति~~ शचीपति इन्द्र दिखायी दिये।

---

१- महाभारत, शान्तिपर्व, ग्यारहवाँ अध्याय।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


तदनन्तर काश्यप ने इन्द्रदेव का पूजन किया और उनकी आज्ञा लेकर वे पुनः अपने घर को लौट गये।[१]

इन्द्र द्वारा राक्षसी यातुधानी से सप्तर्षि एवं अरुन्धती की रक्षा-[१]

एक समय सप्तर्षि एवं अरुन्धती तथा उनके दास-दासी वन में भूख से व्याकुल हो विचर रहे थे। उस समय राजा वृषादर्भि ने अपने सेवकों से गूलर के फल तुड़वा कर महर्षियों के लिए भेजे। उस फल के नीचे उन्होंने कुछ स्वर्ण मुद्राएँ भी रखवा दी थीं। इससे महर्षियों ने उसे लेने से अस्वीकार कर दिया। इसे राजा ने अपना अपमान समझा और क्रोधित हो एक राक्षसी की उत्पत्ति की तथा उसका नाम यातुधानी रखा। उसे उन्होंने सप्तर्षि एवं अरुन्धती तथा उनके दास-दासी को मारने के लिए भेजा। उस समय इन्द्र ने शुनःसख नामक भिक्षु का वेश धारण कर उस कृत्या यातुधानी से उनलोगों की रक्षा की थी।

इन्द्र ने पाण्डवों के हित के लिए ही सूर्य का दिया हुआ कवच और कुण्डल कर्ण से दान के रूप में ले लिया था।[२]

लोकपाल-

इन्द्र लोकपाल के रूप में भी कार्य करते थे। ये पूर्व दिशा के लोकपाल[३] थे।

---

१- महाभारत, अनुशासनपर्व, तिरानबेवाँ अध्याय।

२- वही, वनपर्व, एक सौ वालीसवाँ अध्याय।

३- चतुर्वेदी, गिरिधर शर्मा : पुराण-परिशीलन, पृष्ठ २७४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



## परवर्ती साहित्य में इन्द्र

परवर्ती साहित्य में अनेक राजाओं की तद्रूपता इन्द्र के साथ दिखलायी गयी है। उदाहरणतः राजा दिलीप[१], रघु[२], दशरथ[३] एवं युधिष्ठिर[४] आदि को देवराज इन्द्र के समान बताया गया है। इसी प्रकार राजा दिलीप की महिषी सुदक्षिणा को शची के सदृश माना गया है[५]। एक स्थान पर राजा दिलीप और इन्द्र का एक दूसरे की सहायता करते हुए दोनों लोकों का पालन करने का उल्लेख मिलता है[६]।

## शतक्रतु की ईर्ष्या, इन्द्र और रघु में युद्ध

इन्द्र में ईर्ष्या की प्रवृत्ति सदैव बनी रहती थी। राजा दिलीप ने ९९ अश्वमेध यज्ञ बिना किसी व्यवधान के पूर्ण कर लिये। तब उन्होंने सौवाँ यज्ञ करने के लिए घोड़ा छोड़ा। शतक्रतु को यह बात खटकी। उसने घोड़े को चुरा लिया और स्वयं अदृश्य हो गया। घोड़े की रक्षा का भार रघु एवं अन्य धनुर्धर राजकुमारों को सौंपा गया था। रघु ने उन अश्वों का पता अपनी दिव्य दृष्टि से लगा लिया। उसने देवराज से घोड़े को माँगा किंतु वह उसे देने को तैयार न हुआ। इस पर रघु एवं इन्द्र में घोर युद्ध हुआ। रघु ने इसमें अपने अद्वितीय पराक्रम का परिचय दिया। देवेन्द्र ने उसपर अपना वज्र चलाया। पहले रघु गिर पड़ा किन्तु क्षण भर में ही सँभल कर उठ खड़ा हुआ और युद्ध के लिए आ डटा। इन्द्र उसकी इस वीरता पर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने घोड़े को तो नहीं लौटाया, किन्तु उन्हें बिना अश्वों के ही सौ अश्वमेध यज्ञ के फल प्राप्त हो जाने का वरदान दिया[७]।

---

१- "पुरन्दरश्रीः पुरमुत्पताकं प्रविश्य पौरैरभिनन्द्यमानः।" रघुवंश, २।७४।
२- "य यथौ प्रथमं प्राचीं तुल्यः प्राचीनबर्हिषा।" वही, ४।२८।
३- "पृथिवीं शासतस्तस्य पाकशासनतेजसः।" वही, १०।१।
४- "स स्वहस्तकृतचिह्नशासनः पाकशासनसमानशासनः।" शिशुपालवध, १४।२६।
५- "असूत पुत्रं समये शचीसमा त्रिसाधना शक्तिरिवार्थमक्षयम्।" रघुवंश ३।१३।
६- रघुवंश, १।२६।
७- वही, सर्ग ३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


दूसरे स्थान पर उल्लेख है कि इन्द्र के भय से राजा दिलीप ९९ यज्ञ करके ही सन्तुष्ट हो गये।[१]

इसी प्रकार जिस समय रघु ने विश्वजित् यज्ञ में अपना सब कुछ दान दे दिया और शरीर, मन और वचन से पूर्व के समान ही बना रहा, उस समय इन्द्र उसके इस कठोर तप को देखकर घबरा उठा था।[२]

अध्यात्मरामायण एवं रामचरितमानस में अनेक स्थलों पर इन्द्र का उल्लेख मिलता है।

## इन्द्र और कबन्ध[३]

कहा जाता है कि एक समय कबन्ध नामक राक्षस रोषपूर्वक देवराज इन्द्र के पीछे दौड़ा। इस पर क्रोधित होकर देवेन्द्र ने उसके सिर पर वज्र प्रहार किया। उसके आघात से उस दानव के सिर और पाँव पेट में घुस गये। किन्तु ब्रह्मा जी ने पूर्वकाल में उसे अमरत्व का वरदान दिया था। अत: उसकी मृत्यु न हो सकी। मुखहीन देखकर देवताओं ने दया के वशीभूत होकर देवराज से उसे मुख प्रदान करने को कहा। इस पर इन्द्र उसके पेट में ही मुख होने और एक-एक योजन लम्बी भुजाएं हो जाने को कह कर स्वयं अपने लोक चला गया। इन्हीं भुजाओं से उसे जो कुछ मिल जाता उसे खाकर अपना निर्वाह करता था। इसी कबन्ध का उद्धार श्रीरामचन्द्र ने उसकी भुजाओं को काट कर किया।

---

१- रघुवंश, ३।३८।

२- वही ५।५।

३- अध्यात्मरामायण, अरण्यकाण्ड, सर्ग ९।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



## इन्द्र तथा मेघनाद[१]

रावण ने अपने राज्यारोहण के पश्चात् कुबेर को परास्त किया। इसके बाद वह वरुण को जीतकर इन्द्र का वध करने की इच्छा से स्वर्गलोक पर चढ़ गया। वहाँ इन्द्र और अन्य देवताओं के साथ उसका बड़ा घमासान युद्ध हुआ। इसमें देवराज ने रावण को बाँध लिया। यह समाचार जानकर रावण के पुत्र मेघनाद ने अकस्मात् आकर देवताओं को पराजित किया और सुरनायक इन्द्र को पकड़ कर बाँध लिया तथा अपने पिता को छुड़ा लिया। फिर इन्द्र को लेकर लंकापुरी चला गया। अन्त में ब्रह्मा जी ने जाकर इन्द्र को मेघनाद से छुड़ाया।

## राम-रावण युद्ध में इन्द्र द्वारा राम को रथ प्रदान करना तथा अमृतवर्षा-

राम-रावण-युद्ध में इन्द्र ने राम को पैदल लड़ते हुए देखकर उनके लिए अपना रथ भेजा था।[२]

दूसरे स्थल पर यह उल्लेख है कि रावण के मारे जाने के पश्चात् विभीषण ने जानकी जी को लाकर भगवान् रामचन्द्र को समर्पित किया। तत्पश्चात् इन्द्र ने भगवान् की स्तुति की और उनके हितार्थ आवश्यक कार्य करने की आज्ञा माँगी। इस पर रामचन्द्र जी ने युद्ध में मृत बन्दरों, भालुओं को पुन: जीवित करने को कहा। इन्द्र ने उनके आदेशानुसार उन मृत बन्दरों-भालुओं पर अमृतवर्षा करके उन्हें जीवित कर दिया था।[३]

किन्तु रामचरितमानस[४] में ही तुलसीदास जी ने इन्द्र तथा उसके साथी देवताओं को बहुत ही स्वार्थी, मलिन हृदयवाला, छली आदि कहा है। चित्रकूट में भरत और राम के वार्तालाप के समय इन्द्र ने अन्य देवताओं के साथ उनके प्रति जैसा विचार किया, उसी प्रसंग में गोस्वामी जी ने उसे ऐसा कहा।

---

१- अध्यात्मरामायण, उत्तरकाण्ड, सर्ग २।

२- गोस्वामी तुलसीदास : रामचरितमानस, लंकाकाण्ड, दो० ८८ के आगे।

३- वही, लंकाकाण्ड, दो० ११२-११४। देखिए- द्वीपान्तर के रामायण कृक कविन् २६।७१-२। में लंका पुरी पर इन्द्र द्वारा अमृतवर्षा।

४- वही, अयोध्याकाण्ड, दो० २६४-२६५, सो० ३०१।८।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



एक स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि रावण ने जब सीता जी को ले जाकर अशोक वाटिका में रखा उस समय इन्द्र ने ब्रह्मा का दिया हुआ हवि ले जाकर सीता जी को खिलाया था।[१]

इन्द्रोत्सव -

८वीं श०ई० के शिलप्पदिगरम्[२] नामक दक्षिण भारतीय साहित्य में इन्द्रोत्सव का उल्लेख मिलता है, जिसका प्रारम्भ वैशाखी पूर्णिमा से होता था और २८ दिनों तक चलता था।

इन्द्रमह[३]

श्री वासुदेवशरण अग्रवाल ने 'इन्द्रमह' नामक शीर्षक के अन्तर्गत इन्द्रोत्सव का उल्लेख किया है, जिसकी परम्परा उन्होंने उत्तर वैदिक काल से लेकर आज तक चली आती हुई बतलायी है।

इसी प्रकार यज्ञ में आहुति देते समय जैसे वैदिक काल में इन्द्र को सर्वप्रथम आहुति दी जाती थी, वैसे ही आज भी 'ओं इन्द्राय स्वाहा' कह कर सर्वप्रथम आहुति दी जाती है।

इन्द्र के विविध नाम-

भारत में इन्द्र विभिन्न नामों से अभिहित किया गया है। अमरकोष[४] में इसके निम्नलिखित नाम मिलते हैं-- इन्द्र, मरुत्वान्, मघवा, बिडौजा, पाकशासन, वृद्धश्रवा, सुनासीर, पुरुहूत, पुरन्दर, जिष्णु, लेखर्षभ, शक्र, शतमन्यु, दिवस्पति, सुत्रामा, गोत्रभिद्, वज्री, वासव, वृत्रहा, वृषा, वास्तोष्पति, सुरपति, बलाराति, शचीपति, जम्भभेदी, हरिहय, स्वाराट् नमुचिसूदन, [redacted], दुश्च्यवन, तुराषाट्, मेघवाहन, आखण्डल, सहस्राक्ष एवं ऋभुक्षा।

---

१- चौबे, शंभनारायण: मानस अनुशीलन, काशिराज की प्रति का दीपक, अरण्यकाण्ड, पृ० १८६-६०, उहाँ विधाता ........ गएउ निज लोका।
२- बनर्जी, जे०एन० : डेवेलपमेन्ट ऑव हिन्दू आइकोनोग्राफी पृ० ५२२।
३- अग्रवाल, वासुदेवशरण: प्राचीन भारतीय लोकधर्म, पृ० २८-४१।
४- अमरकोष १।१।४१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



इसके अतिरिक्त अन्य साहित्य में इसे अप्सुजित्, कौशिक, गार्ष्टेय, त्रैलोक्याधिपति, देवराज, देवेन्द्र, महेन्द्र, वृत्रहन्, शतक्रतु, सवितृ, सहस्वान्, सुरेन्द्र, सोमपा आदि भी कहा गया है ।

## बौद्ध और जैन साहित्य में इन्द्र

बौद्ध ग्रन्थों में अन्य हिन्दू देवताओं के साथ-साथ इन्द्र का भी उल्लेख मिलता है । गुणकारण्डव्यूह[१] में उल्लिखित है कि पद्मपाणि के स्कन्धों के बीच से ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई तथा उनके दोनों नेत्रों से सूर्य और चन्द्रमा, मुंह से वायु, दाँत से सरस्वती, पेट से वरुण, घुटनों से लक्ष्मी, पैरों से पृथ्वी एवं उनकी नाभि से जल की उत्पत्ति हुई । इसी प्रकार उनके बालों की जड़ से अन्य देवता और इन्द्र उत्पन्न हुए थे ।

ऐसा विश्वास किया जाता है कि पर्वत वर्षा के बादलों पर नियंत्रण रखते हैं और वज्रपाणि उनके रक्षक की भाँति वर्षा के देवता के रूप में पर्वतों के ऊपर दिखाई पड़ते हैं । अत: जब वर्षा की आवश्यकता होती है तो उत्तर बौद्ध धर्मावलम्बी उनकी प्रार्थना करते हैं ।

ग्रून्वेडेल वज्रपाणि को भारतीय वर्षा के देवता शक्र या इन्द्र से अभिन्न समझते हैं ।

बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार तथागत के जन्म के समय शक्र उपस्थित था । इसके अतिरिक्त महल त्यागने के समय भी इन्द्र ने उनकी सहायता की थी । ऐसा कहा गया है कि शाक्यमुनि के कपिलवस्तु लौटते समय वज्रपाणि आठ देवताओं के साथ उनके रक्षक के रूप में रहे । इस प्रकार इन्द्र के विशिष्ट गुणों को वज्रपाणि में परिवर्तित किया गया ।[२]

---

१- गेटी, ए० : दि गॉड्स् ऑव् नार्दन् बुद्धिज्म्, पृ० ६८ ।

२- वही, पृष्ठ ५१ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



ललितविस्तर[१] से ज्ञात होता है कि बुद्ध के सम्बोधि प्राप्त करने के बाद महाब्रह्मा और शक्र कई बार बुद्ध के पास यह प्रार्थना करने के लिए गये कि वे अपने नवीन ज्ञान का उपदेश लोगों को दें। बड़ी कठिनाइयों के बाद बुद्ध ने इस प्रार्थना को स्वीकार किया।

जैन साहित्य में भी इन्द्र का उल्लेख मिलता है। उदाहरणार्थ, एक परम्परा[२] के अनुसार "देवराज इन्द्र के सेनापति या तो बकरे के सिर वाले दक्ष प्रजापति थे अथवा हिन्दू देवशास्त्र के स्कन्द-कार्तिकेय के मित्र छागवक्त्र थे।"

अभिलेखों में इन्द्र

कुछ अभिलेखों में भी इन्द्र का उल्लेख मिलता है। उदाहरणार्थ नागनिका के नानाघाट गुहा अभिलेख[३] का प्रारम्भ धर्म, इन्द्र, संकर्षण, वासुदेव, यम, वरुण, कुबेर तथा वासव आदि देवताओं की स्तुति से होता है।

" (सिधं।०).... नो धंमस नमो इंदस नमो संकसन- वासुदेवानं चंद-सूरानं (महि) मा (व) तानं चतुंनं च लोकपालनं यम-वरुन-कुबेर-वासवानं नमो कुमारवरस ख(द) सिरिस र (ञो)"

कला में इन्द्र

सिन्धुघाटी की सभ्यता की कला में इन्द्र का कोई चित्र या मूर्ति नहीं प्राप्त हुई है। किन्तु हाथी का चित्र, जो वैदिक काल से आज तक इन्द्र का विशिष्ट वाहन माना जाता है, सिन्धुघाटी से प्राप्त

---

१- जोशी, नीलकण्ठ पुरुषोत्तम : मथुरा की मूर्तिकला पृ०४६।
२- बनर्जी, जे०एन० : डेवलपमेण्ट ऑव् हिन्दू आइकोनोग्राफी, पृ० ५६२।
३- सरकार, डी०सी० : सेलेक्ट इंस्क्रिप्शन्स पृ० १८६।
रोचक बात यह है कि यहाँ धर्म और इन्द्र की पहचान लोकपाल यम और वासव से न करके उनका अलग उल्लेख है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


घीया पत्थर की मुद्राओं पर अंकित हैं। वैदिक काल में मूर्तिपूजा का प्रचलन न था । वैदिक साहित्य तो इन्द्र की स्तुतियों से भरा पड़ा है, किन्तु उस समय के कलावशेषों में इन्द्र का चित्र या मूर्तियाँ उपलब्ध नहीं हैं।

## सिक्कों पर इन्द्र का अंकन

कुछ ग्रीक शासकों के सिक्कों पर अंकित आकृतियों की पहचान इन्द्र से की जाती है। यूक्रेटाईडेस और एण्टीआल्किडस के सिक्कों पर सिंहासन पर बैठी हुई एक आकृति है, जिसके सामने गज अथवा गजशीर्ष अपनी सूंड़ को ऊपर उठाये हुए अंकित है। एण्टीआल्किडस के विशेष प्रकार के सिक्के पर उसी देव को हाथी की बगल में चलते हुए दिखाया गया है। हाथी भी अपनी सूंड़ को उठाये हुए चल रहा है।[१]

यूक्रेटाईडेस एवं एण्टीआल्किडस के रजत मुद्रा के पृष्ठ भाग पर उसी देव की खड़ी आकृति है। उसके बायें हाथ में राजदण्ड है और दायाँ हाथ नीचे लटक रहा है। बायीं ओर जाते हुए एक हाथी अंकित है। वह अपनी सूंड़ से देव को नमस्कार कर रहा है। उसके सिर पर नाइके चित्रित है।[२]

मावेस के सिक्कों पर सिंहासन पर बैठे हुए देव की आकृति है। वह अपना एक हाथ वज्र के शीर्ष पर रखे हुए अंकित है। बनर्जी ने सिक्कों की इन आकृतियों को इन्द्र के विभिन्न रूप माना है, जिसकी पहचान वे ग्रीक जेउस से करते हैं।[३] यूक्रेटाईडेस की मुद्राओं पर इन्द्र जेउस की वस्त्रभूषा में दिखाया गया है।[४]

---

१- बनर्जी, जे०एन० : डेवेलप्मेण्ट् ऑव् हिन्दू आइकोनोग्राफी पृ० ६१।
२- वही पृष्ठ १४८।
३- बनर्जी, जे०एन० डेवेलप्मेण्ट् ऑव् हिन्दू आइकोनोग्राफी, पृ० ६।
४- वही, १४८।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


इसी प्रकार पांचाल के इन्द्रमित्र के सिक्कों पर इन्द्र दो भिन्न प्रकार से प्रदर्शित है। प्रथम प्रकार में वह स्तम्भ का सहारा लिए सामने की ओर खड़ा है। उसके दाहिने हाथ में कोई अस्पष्ट वस्तु है। द्वितीय प्रकार में वह तोरण पर (आर्चवे के भीतर) दिखलाया गया है। इसके सम्बन्ध में दूसरी जानकारी का अभाव है।[1]

इन सिक्कों पर अंकित पशु और देव का सन्निधान, जिसमें ग्रीक ओलम्पिक देवों के राजा जेउस में हम भारतीय देवराज इन्द्र के दर्शन करते हैं। इसप्रकार हम इन्द्र को पशुवत् एवं मनुष्यवत् दोनों ही रूपों में पाते हैं।[2]

कुछ सिक्कों पर डेमेट्रियस और लिसियस को गजशीर्ष प्रकार का मुकुट धारण किये हुए दिखाया गया है।[3] उपर्युक्त तथ्य विदेशी शासकों पर भारतीय प्रभाव व्यक्त करते हैं।

भारतीय कला में इन्द्र के चित्रांकन के कुछ प्रमुख और उल्लेखनीय दृश्यों का यहाँ मैंने वर्णन किया है।

साँची स्तूप[4] नं०१ के दक्षिणी द्वार के पश्चिमी स्तम्भ के सामने के नीचे के फलक (फलक ए ३) पर उत्कीर्ण चित्र में एक जुलूस का दृश्य (चित्र संख्या १) है, जिसमें एक गज पर अपनी सभा की एक स्त्री के साथ एक राजा बैठा है। इसकी पहचान विद्वानों ने इन्द्र से की है। और महिषी शची छत्र लिए ऐरावत पर आरूढ़ है। एक शिशु उसके सामने हाथी की गरदन पर बैठा है जिसे वह पकड़े हुए है। नीचे छोटे और स्थूल बर्तन के समान तोंद वाले यक्ष हैं जो उन्हें ले जा रहे हैं।

---

१- बनर्जी, जे०एन० : डेवेलपमेण्ट ऑव् हिन्दू आइकोनोग्राफी पृ० १४६।
२- वही १४६।
३- वही १५०।
४- मार्शल एण्ड फूशे : द मोनुमेण्ट्स ऑव् साँची प्लेट १८।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


बोधगया[1] में स्तम्भों के मध्य उत्कीर्ण चित्र में इन्द्र ब्राह्मण शान्ति के रूप में चित्रित है। इसकी रेलिंग पर एक चित्र है, जिसमें इन्द्र माली की भाँति मुट्ठी में घास लिये चित्रित है। बोधिसत्त्व बोधिवृक्ष के नीचे अपना आसन बनाए हुए हैं।[2]

भाजा विहार[3] के प्रवेश द्वार के दाहिनी ओर एक सुन्दर प्रस्तर पर देवराज इन्द्र (चित्र संख्या २) चित्रित है। वह सभी पार्थिव हाथियों के पूर्वज विशालकाय ऐरावत हाथी पर आरूढ़ है। [redacted]। इसमें पृथ्वी के व्यक्तियों से तुलना करने पर इन्द्रदेव और उसका वाहन विशालकाय हैं। नीचे खिलौने की तरह आकृतियाँ बनी हैं। मध्य में एक पवित्र वृक्ष है जो प्राचीर से घिरा है। बायीं ओर दरबार का दृश्य है। एक लचीली रहनी के बने सिंहासन पर छत्र धारण किए राजा बैठा है जो गायकों और नृत्य करने वालों द्वारा सेवित है। स्वर्गीय गज सूँड़ ऊपर उठाये हुए एक मजबूत वृक्ष लिये हुए है जिसको उसने अपनी यात्रा में उखाड़ लिया है और जो आँधी की अप्रतिहत तेजी का प्रतीक है।

गांधार और मथुरा के कुछ प्रारम्भिक बौद्ध दृश्यों में इन्द्र का चित्र एवं मूर्ति भी प्राप्त होती है। इन्द्र और ब्रह्मा दोनों को बुद्ध के अनुचर के रूप में दिखाया गया है। अनेक दृश्यों में बोधिवृक्ष के नीचे बुद्ध या उनके प्रतीक चिह्न बने रहते हैं और उनके दोनों पार्श्व में मुकुटधारी इन्द्र और जटाधारी ब्रह्मा नमस्कार की मुद्रा में अंकित हैं। मथुरा के इन्द्रशाल गुहा के लाल बलुए पत्थर पर उत्कीर्ण चित्र उल्लेखनीय है। इसमें बुद्ध और वन का प्रतिनिधित्व करने वाले सिंह, मयूर, वीणा पर गायन करने वाला गन्धर्व एवं ऐरावत के साथ इन्द्र का अंकन बड़ी ही कुशलता से

---

१- कुमारस्वामी, ए०के० : हिस्ट्री ऑव् इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट पृ०३२।

२- रौलैण्ड, बी०: दि आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर ऑव् इण्डिया पृ० ५६।

३- ज़ीमर, एच० : मिथ्स एण्ड सिम्बॉल्स इन् इण्डियन आर्ट एण्ड सिविलाइज़ेशन पृ० ५३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



हुआ है। यह दृश्य दिव्यावदान के वर्णन से मिलता जुलता है।[१]

एक विशेष मूर्ति में इन्द्र को बहुशीर्षक दिखाया गया है। उसके बीच में इन्द्र और कन्धों से निकलती हुई पांच अन्य मूर्तियाँ हैं। इन्द्र के मस्तक पर शूपाकृति मुकुट है, जो मथुरा कला में उसका विशेष लक्षण है इस मूर्ति की पहचान इन्द्र के पंचेन्द्र स्वरूप से की जा सकती है जिसका उल्लेख महाभारत और मारकण्डेय पुराण में आया है।[२]

इन्द्र का अंकन वज्रपाणि यक्ष के रूप में भी हुआ है जो हाथ में वज्र लिये है, किन्तु उस रूप में वह बुद्ध का अनुचर है। इन्द्र-प्रतिमाओं में ऊपर की ओर उठा हुआ आयताकार मुकुट उसका विशेष लक्षण है। कभी-कभी माथे पर तीसरा नेत्र भी दिखाया गया है।[३]

पहाड़पुर में प्रस्तर पर उत्कीर्ण दृश्य में इन्द्र दिक्पाल के रूप में दिखाया गया है। इसमें वह अपने वाहन के सामने खड़ा है। उसके सिर पर मणि-माणिक्य का बना किरीट मुकुट है, पीछे प्रभामण्डल है एवं माथे पर दिगन्तसमस्थिति में तृतीय नेत्र है।[४]

शुंग, आन्ध्र, क्षत्रप काल[५] के एक चित्र में एक विशालकाय गज पर राजा बैठा है, उसके पीछे सेवक छत्र लिये हुए हैं। वह हाथी अपनी सूंड़ में मूल सहित वृक्ष लिये है। यह चित्र बहुत सुन्दर है एवं कुशलता से चित्रित है विद्वानों ने इसकी पहचान इन्द्र से की है जो अपने सेवक के साथ ऐरावत पर आरूढ़ है।

---

१- जोशी, नीलकण्ठ पुरुषोत्तम :मथुरा की मूर्तिकला, पृ० ४६-४७।

२- अग्रवाल, वासुदेवशरण : भारतीय कला पृ० ३१८ ।

३- वही, पृष्ठ ३१८।

४- बनर्जी, जे०एन० : डेवेलपमेण्ट ऑव् हिन्दू आइकोनोग्राफी, पृ० ५२३ ।

५- कुमारस्वामी, ए०के० : हिस्ट्री ऑव् इण्डियन एण्ड इन्डोनेशियन आर्ट,पृ०२५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


कुषाण, परवर्ती आन्ध्र और गुप्तकाल[१] के एक जातक दृश्य में इन्द्र को अवलोकितेश्वर के रूप में दिखाया गया है।

गुप्तकालीन देवगढ़ मन्दिर में प्रस्तर पर अनेक उत्कीर्ण दृश्य प्राप्त होते हैं। इनमें विष्णु के अनन्त शयन (चित्र संख्या ३) का दृश्य उल्लेखनीय है। यह पूर्ण दृश्य तीन समान भागों में विभक्त है। इसके मध्य में अनन्तशयन विष्णु की मूर्ति का अंकन है। लक्ष्मी उनके पैर दबा रही हैं। उनके पीछे एक पुरुष तथा एक स्त्री की खड़ी आकृतियाँ हैं जो सम्भवत: गदादेवी और चक्रपुरुष हैं। ऊपर की ओर मध्य में ब्रह्मा कमल (जो नारायण की नाभि से निकला है) पर बैठे हुए हैं उनके एक ओर वृषभ पर हर-पार्वती अंकित हैं और दाहिनी ओर इन्द्र और कार्तिकेय अपने-अपने वाहनों पर बैठे हैं। ब्रह्मा को छोड़कर ये सभी आकृतियाँ विद्याधरों के समान हैं। नीचे के भाग में चार सेविकाएँ और दो असुरों के झगड़े का दृश्य है।[२]

अजन्ता गुफा नं० १७ में बरामदे की पिछली दीवार पर अंकित दृश्य में बुद्ध तुषितस्वर्ग की यात्रा पर जाते हैं। उस समय इन्द्र अपने दैवीय संगीतकारों के साथ उनके अभिनन्दन के लिए उड़ते हुए चित्रित हैं।[३]

एलोरा[४] के जैन देवालय में इन्द्र की मूर्ति (चित्र संख्या ४) प्राप्त होती है। इसे देखने से यह विदित होता है कि यह इन्द्र की जैन मूर्ति है। इसमें देवराज इन्द्र गम्भीर एवं भयप्रद गुरुत्व के साथ अपने वाहन गज पर आरूढ़ हैं। उसके पार्श्व में दो सेवक हैं और कल्पवृक्ष की छाया में हैं।

---

१- कुमारस्वामी, ए०के०: हिस्ट्री ऑव् इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ० ५०।
२- बनर्जी, जे०एन० : पूर्वोक्त पृ० ४०७।
३- रोलैण्ड, बी० : दि आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर ऑव् इण्डिया पृ० १४६।
४- ज़ीमर, एच० : मिथ्स एण्ड सिम्बॉल्स् इन् इण्डियन आर्ट एण्ड सिविलाइज़ेशन पृ० ५६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



एलोरा गुहा नं० ३३[१] के तीर्थंकर महावीर के मन्दिर में देवराज इन्द्र एवं महिषी इन्द्राणी को महावीर के संरक्षक (चित्र संख्या ५) रूप में दिखाया गया है ।

खजुराहो[२] के लक्ष्मण, पार्श्वनाथ तथा विश्वनाथ आदि मन्दिरों में इन्द्र का लोकपाल के रूप में अंकन है । इन्द्र पूर्व दिशा का संरक्षक है । इसका अंकन दक्षिण-पूर्व के कोने पर हुआ है । इसका वाहन ऐरावत इसकी बगल में है । वज्र और अंकुश इसका मुख्य आयुध है, किन्तु कभी-कभी यह सर्प, मृणाल, पद्मकलिका या जलपात्र के साथ दिखाया गया है । प्राय: यह चतुर्भुज रूप में अंकित है । इसकी मुख्य शिरोभूषा करण्डमुकुट है इसके अतिरिक्त यह किरीटमुकुट भी धारण किये हुए है ।

इस प्रकार ब्राह्मण बौद्ध एवं जैन तीनों कलाओं में इन्द्र को स्थान दिया गया है ।

---000---

१- सीमर, एच० : दि आर्ट ऑव् इण्डियन एशिया प्लेट २४४ ।

२- भारती, नं० ६, भाग २ (१९६५-६६) पृष्ठ --१०५-- ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## द्वितीय अध्याय

### कम्बुज देश के संस्कृत अभिलेखों और कला में इन्द्र

कम्बुज देश में शैव, वैष्णव एवं बौद्ध तीनों धर्मों का प्रभाव, प्रचार और प्रसार रहा है। इन धर्मों से सम्बद्ध देव-देवियों के अतिरिक्त अन्य ब्राह्मण देवताओं का परिचय कम्बुज के लेखों में मिलता है, जैसे गणेश[1], आदित्य[2], ब्रह्मा[3] एवं इन्द्र। देवियों में मुख्यतया गंगा[4], सरस्वती[5], इन्द्राणी[6], स्वाहा[7], वागीश्वरी[8], गौरी[9], आदि का उल्लेख आया है।

इन्द्र कम्बुज देश का प्रिय देवता था। कम्बुज के अभिलेखों में इन्द्र के विविध नाम मिलते हैं, जैसे त्रिदशाधिप, देवेन्द्र, पाकशासन, महेन्द्र, वज्रिन्, वासव, शक्र, शतक्रतु, सुरपति आदि। वह शौर्य-वीर्य के कारण कम्बुज का महत्वपूर्ण देवता समझा जाता था।

---

१- यशोवर्मा का प्रः बत् ( Prah Bat ) शिलालेख (८९१ ई०), मजूमदार, रमेशचन्द्र: इन्स्क्रिप्शन्स आव् कम्बुज, कलकत्ता, १९५३, पृ० ७४। अभिलेखों के साथ जहाँ कहीं भी पृष्ठसंख्याएँ दी गई हैं, वे इसी पुस्तक से ली गयी हैं।

२- स्नय् पोल् ( Snay Pol ) अभिलेख।

३- जयवर्मा चतुर्थ का प्रसत् अन्दोन् ( Prasat Andon) अभिलेख, श्लोक संख्या ५, पृ० १७२।

४- वही, श्लो० सं० ३, पृष्ठ १७२।

५- यशोवर्मा का फ्नोम् सन्दक् ( Phnom Sandan ) शिलालेख (८९७ ई०)। श्लो०सं०९, पृ० १५२।

६- महारानी कुलप्रभावती का नेअक् त-दम्बङ् देक् (Neak Ta Dambang Dek ) अभिलेख, श्लो० सं० ४, पृ० २।

७- वही, श्लोक संख्या ४, पृ० २।

८- उदयादित्यवर्मा का प्रसत् ख्न ( Prasat Khna ) अभिलेख, श्लो० सं० ४, पृ० ३०७।

९- यशोवर्मा का फ्नोम सन्दक् ( Phnom Sandak ) अभिलेख, श्लो०सं०८, पृ० १५२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



अतएव यहाँ से प्राप्त लेखों में शक्तिशाली राजाओं की तुलना इन्द्र से की गयी है। कम्बुज के अनेक राजाओं ने इन्द्र के नाम पर अपना नामकरण भी किया है, जैसे महेन्द्रवर्मा, इन्द्रवर्मा[1], जयइन्द्रवर्मा, धरणीन्द्रवर्मा आदि। इसी प्रकार इन्द्रवर्मा (८७७-८९ ई०) की महिषी का नाम इन्द्रदेवी था एवं जयवर्मा पंचम (९६८-१००१ ई०) की छोटी बहन इन्द्रलक्ष्मी थी[2]।

कम्बुजराजाओं की इन्द्र से तुलना

महेन्द्र के समान विश्रुत- इन्द्र के समान महेन्द्रवर्मा (६००-६१० ई०) ने शंकरतडाग नामक जलाशय खुदवाया। महेन्द्रवर्मा शैव था और उसने अपनी तुलना महेन्द्र से की है-

> यश्श्रीमहेन्द्रवर्म्मेति महेन्द्र इव विश्रुतः।
> स शंकरतटाकाख्यंचखानेमंजलाशयम् ।।"

यह शिलालेख १९६१ में बैंकाक से ३५० किलोमीटर पूर्व में अरण्य-प्रदेश में थाईदेश के पुरातत्त्वविभाग को मिला है। इसकी लिपि ७वीं शताब्दी की पल्लवग्रंथम् लिपि है[3]।

विक्रम में त्रिदशाधिपतुल्य- चम्पा के राजा प्रकाशधर्म के माइसोन् (Myson ) अभिलेख[4] के अनुसार, कम्बुज का महेन्द्रवर्मा अपनी शक्ति में त्रिदशाधिप के समान था।

> " स श्रीमहेन्द्रवर्म्मा त्रिदशाधिपतुल्यविक्रमः प्रथितः"

---

१- हाल, डी०जी० ई० : ए हिस्ट्री ऑव् साउथ-ईस्ट एशिया, पृ० ९६।
२- वही, पृ० ९९।
३- छाबरा, बी०एच० : एक्सपन्शन् ऑव् इण्डो-आर्यन् कल्चर, पृ० १००।
४- मजूमदार, आर० सी० : चम्पा, पृ० १९।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



शक्रतुल्य देव -

ईशान वर्मा (६११-३५ ई०) के त्राउ तसर् (Trau Tasar) अभिलेख में इसकी तुलना इन्द्र से की गयी है। अभिलेख में कहा गया है कि शक्रतुल्य देव श्री ईशानवर्मा श्री - समन्वित विष्णु की भाँति अपने ही पराक्रम से पृथिवीश्वर हुए।

देवश्श्रीशानवर्म्मेति बभूव पृथिवीश्वरः ।
शक्रतुल्यस्स्ववीर्येण श्रिया च हरि...मः ।।२।।

ब्रह्मा द्वारा इन्द्राभिषेक - सम्राट् श्री इन्द्रवर्मा (८६६-८९ ई०) के प्रह को (Prah Ko) अभिलेख में उसकी प्रशंसा करते हुए, उसे इन्द्र के समान माना गया है और कहा गया है कि जिस ब्रह्मा के द्वारा इन्द्र अभिषिक्त हुए उसी ब्रह्मा ने इन्द्रवर्मा के पदवारि से अनेक गुणवानों का भी अभिषेक किया :-

येनाभिषिक्तो विधिना महेन्द्रस्स्वयंम्भुवारोपितदेवराज्यः ।
तेनाभिषेक (ं) गुणवाननेकं यश्श्रीन्द्रवर्म्मापिदवार्य्यवीर्य्यः।।

पराक्रम में पाकशासन के समान १- कम्बुज में इन्द्र को बड़े सम्मान की दृष्टि से देखा गया है। उसे महान् पराक्रमी एवं रणभूमि में शत्रु पर विजय करने वाला माना गया है। फूनान् का प्रसिद्ध एवं लोकविश्रुत राजा जयवर्मा प्रथम था। यह शक्तिशाली, पराक्रमी एवं शत्रुओं पर विजय प्राप्त करनेवाला था। अतः इसके अभिलेख[१] में इसकी तुलना इन्द्र से की गयी है। यथा-

यः पाकशासन इव क्षितीन्द्रैर्धृतशासनः ।
राजा श्रीजयवर्म्मेति विजिताराातिमण्डलः ।।

---

१- तुओल् कोक् प्रः (Tuol Kok Prah) अभिलेख, श्लो० सं० २, पृ० २६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh 

इन्द्र के वज्रपात से तुलना :-

कम्बुज नरेश यशोवर्मा[1] (८८९-९०० ई०) अद्वितीय वीर एवं पराक्रमी था। जिस प्रकार इन्द्र ने अपने एक ही वज्रपात से पर्वतों के पंख के टुकड़े-टुकड़े कर दिये थे, उसी प्रकार यह राजा तलवार से लौहदण्ड को सहसा तीन खण्डों में काट देता था।

"त्रिधाकृपाणैकनिपातनेन यो लोहदण्डं सहसा विभेद।
-----------योग्यमिन्द्रो वज्रैकपातादिव तार्क्ष्यपक्षाम् ॥

इन्द्र और उरगेन्द्र की कथा से उपमा :-

इस वीर ने आश्रय ग्रहण करने वाले शत्रु को भी शरण दी और दुर्मद शत्रुओं के गर्व को उसी प्रकार चूर किया जिस प्रकार आलिंगमान शेष को अग्नि के ताप से इन्द्र ने छोड़ दिया था :

यश्च शत्रुमध्याश्रितमेकवीरो दूरादपादुत्तमदुर्मदारेः।
आलिंगमानं व्यजहात्तु रक्तं कृशानुतापादुरगेन्द्रमिन्द्रः ॥[2]

सुरपति तुल्य :- राजेन्द्रवर्मा (९४४-६८ ई०) को रति सदैव के लिए प्राप्त हो गयी थी। प्रे रूप् (*Pre Rup*) अभिलेख के अनुसार, त्रिभुवन के अभ्युदय के हेतु अदिति से उत्पन्न कश्यप की कन्या रति द्वितीय मन्वन्तर में सुरपति तुल्य इस सम्राट् के यहाँ आ गयी और पुनः वह पूर्वेन्द्र के पास नहीं गयी।

"राज्यस्थितौ त्रिभुवनाभ्युदयाय यस्य या काश्यपी रतिरभूद-
दितिप्रभूता/मन्वन्तरे सुरपतेरिव गोप्तुरस्मिन् पूर्व्वेन्द्रसंपदि
न सा कृतसन्निधाना ॥"

---

१- पूर्वी बरे (Eastern Baray) अभिलेख: श्लो० सं० ७६, पृ० ७५।
२- वही; श्लो० सं० ६४, पृ० ७४।
~~३- स्पाक् कक् पम् ( ) अभिलेख: श्लो० सं० ६३।~~

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



विद्वत्ता में देवेन्द्र के समान~~(१०५०-६६ ई०) :~~

उदयादित्यवर्मा[१] (१०५०-६६ ई०) विद्वान् एवं अर्थशास्त्रादि समस्त शास्त्रों में देवेन्द्र और महर्षि कश्यप के समान कहा गया है।

धियोदयादित्यमहीधरन्तं योऽध्यापयां सूरिभिरास सेव्यः ।
शिष्टार्थ शास्त्रादि समस्त शास्त्रदेवेन्द्र चन्द्राविव कश्यपात्री।।

युद्ध क्षेत्र में इन्द्र और कम्बुज राजों की तुलना :

युद्ध में वज्रिन् के समान- सम्राट् यशोवर्मा[२] अग्रगामी दानी था। इसने एक हाथ ( दायें हाथ ) से दान की वर्षा करके अपने अतिथि की संवर्द्धना की, किन्तु युद्ध में दक्षिण और वाम दोनों हाथों से बाणों की वर्षा करके इन्द्र का संवर्द्धन किया।

एकदोर्दानवृष्ट्या यः स्वस्यातिथिमवर्द्धयत् ।
युधि सव्यापसव्योत्थैर्व्वाणिवर्षैस्तु वज्रिणः ।।

इन्द्रधनुष से युक्त शक्र के समान :-

जयवर्मा सप्तम[३] (११८१-१२१८ ई०) कम्बुज का सर्वाधिक शक्तिशाली, महान् वीर, पराक्रमी, धार्मिक एवं तेजस्वी नरेन्द्र था। युद्ध क्षेत्र में इस राजेन्द्र की नीली तलवार एवं लाल स्वर्ण वर्ण के अस्त्रों को देखकर शस्त्र- प्रहार करने वाले शत्रु राजा उसे इन्द्रधनुष से युक्त साक्षात् शक्र समझ कर आश्चर्य- चकित हो उसके चरणों पर गिर जाते थे।

आश्चर्यमाणं युधि येन भूपा नीलासिमग्रारूणहेमगौरम् ।
पुरास्तिरश्च शक्रधनुःकृताधमी त्येव दृष्ट्वास्त्रभुवः प्रणेमुः ।।

---

१- स्दोक् कक् थोम् (Sdok Kak Thom ) अभिलेख; श्लो० सं० ३८ पृ० ३६७।
२- ( पूर्वी बरै Eastern Baray ) शिलालेख; श्लोक सं० ३६ पृ० १०६।
३- प्रः खन् (Prah Khan ) अभिलेख; श्लो० सं० २५, पृ० ४६८

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


## इन्द्र और शची : राजा और राजलक्ष्मी

सम्राट् यशोवर्मा विद्वान्, प्रजारक्षक एवं कुशल राजनीतिज्ञ था। इसकी पुष्टि उसके पूर्वी बरे (Eastern Baray) अभिलेख से होती है। इसने अपनी नीतिमयी छाया के नीचे प्रजाजनों की रक्षा करते हुए राजलक्ष्मी का वैसे ही भोग किया, जैसे इन्द्र अपने कल्पवृक्ष के नीचे शची के साथ रति-क्रीड़ा में मग्न रहते हैं।

* छायाघने नीतिमति प्रतापे मुक्तान्यरक्षां बुभुजेश्रियं यः।
सत्पुष्पधूलीशयने स्ववृक्षे किं शय्ययेन्द्रस्य शचीरतौ हि॥

### शतक्रतु इन्द्र के समान

महाराजा ईशानवर्मा[१] ने संख्यातीत या असंख्य यज्ञ संपन्न किये थे जिसके कारण देवराज इन्द्र भी अपने शतक्रतु नाम को अधिक महत्वशाली नहीं मानता था।

संख्यातीतया यस्य क्रतूनाममराधिपः।
शतक्रतुकृतन्नाम मन्ये न बहुमन्यते॥

### शतक्रतु तुल्य वृत्ति-

सूर्यवर्मा प्रथम[२] (१००२-५० ई०) कम्बुज का श्रेष्ठ सम्राट् था। यह धार्मिक राजा निरन्तर यज्ञ करनेवाला था। इस कारण वह पृथ्वी पर शतक्रतु के समान था।

निरन्तराक्लिष्टनिसृष्टयज्ञैश्श शतक्रतोर्योभुवि तुल्य वृत्तिः।
दितिकारामरविप्रकीर्णामिथ्यासितां पुण्यजनैरिव द्याम्॥

---

१- सम्बोर प्रेइ कुक् (Sambon Prei Kuk) अभिलेख, श्लो० सं० ५ पृ० २२।
२- प्रसत् संखन् (Prasat Sankhan) अभिलेख, श्लो० सं० १७, पृ० ६१०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



शतक्रतु से बढ़कर - यशोवर्मा के लोले अभिलेख में राजा द्वारा किये गये असंख्य यज्ञों से उठती हुई धूम की तरंगें शतक्रतु के पद को आक्रान्त करने के लिए सीढ़ियों के सदृश प्रतीत हो रही हैं ६-

यस्यासङ्ख्यमखोद्भूतधूमजालैस्तरंगिभि:
शतक्रतुपदाक्रान्तिमान्सोपानवानिव ।।

राजा के शतक्रतुओं से भयभीत देवेन्द्र १ जयवर्मा चतुर्थ ( ९२८-४२ ई०) के पुत्र हर्षवर्मा द्वितीय के फ्नोम् बयङ्० (Phnom Bayang ) अभिलेख में जयवर्मा को सौ अश्वमेध यज्ञ करने वाला बताया गया है। उसके यज्ञों को देखकर इन्द्र इस चिन्ता में पड़ गया कि क्या वह इन्द्रासन से च्युत कर दिया गया ? इसके अतिरिक्त इस सम्राट् का प्रभाव इतना अधिक बढ़ गया कि सम्पूर्ण त्रिभुवन में स्थान -स्थान पर रहनेवाले (मनीषियों) ने इस महाराज को देखकर ब्रह्मा, शिव, उपेन्द्र, देवेन्द्र और कुबेर को भी देखना त्याग दिया -

शतक्रतुवतो यस्य क्रतून् वीक्ष्य शतक्रतु: ।
किन्न्वहंच्यावितस्तैनेतीव चिन्तापरोऽपर: ।
यस्य त्रिभुवनस्थाने स्थाने स्थितवतान्नृनां ।।
ब्रह्मेशोपेन्द्र देवेन्द्रलोकालोकनशैथिल: ।।

इन्द्र के समान दानप्रिय

कम्बुजेन्द्र इन्द्रवर्मा [१] महान् दानी राजा था । जैसे वासव सम्पूर्ण पृथ्वी पर वर्षा करता है किन्तु पर्वत शिखरों पर विशेष रूप से वर्षा करता है, वैसे ही इन्द्रवर्मा गुणीजनों के प्रति अधिक दयालु था ।

दानं यस्यापि सर्व्वत्र विशेषेण गुणाधिके ।
प्रायशस्तुंगशिखरे गिरौ वर्षति वासव: ।।

---

१- प्र: को० (Prah Ko ) अभिलेख, श्लो० सं० २९ पृ० ६३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजा की दानकीर्ति का ऐरावत हाथी द्वारा गुणगान :-

सम्राट् यशोवर्मा[१] भी महादानी एवं याचकों पर कृपा करने वाला था। किसी के द्वारा बड़ी वस्तु की याचना करने पर इनका मुख- कमल खिल उठता था। अत: ऐरावत हाथी भी इसकी कीर्ति का गुणगान करता है।

यश्चातियाच्ञां परकोपहेतुं सेहेऽर्थिनान्दानविकासिवक्त्रः।
चिरं बिभर्त्तीन्द्र गजोपि गीतिं कुतो ध्यहे पि प्रसवः फलार्थी॥

इन्द्र के समान ही राजा द्वारा धर्मवर्षा - कम्बुजेन्द्र राजेन्द्र वर्मा धर्मपरायणा और दानी राजा था। प्रेरूप (Pre Rup) मन्दिर से प्राप्त अभिलेख से ज्ञात होता है कि जिस प्रकार इन्द्र अपने अधिकृत बादलों से सम्पूर्ण विश्व को जल प्रदान करता है, उसी प्रकार इस महाराज ने भी अपने अधिकारियों के द्वारा पृथ्वी पर धर्म की वर्षा की और दूध तथा अन्नादि का वितरण पात्रानुकूलता के विचार से किया।

इन्द्रेण तेनाधिकृतैः पयोदैः पुंभिस्स्वधर्मैकरसं प्रदेयम्।
सषड्रसं पात्रवशात् समाप्य देवीं पयोदिव्यमिवान्नमिज्याम्॥

द्वितीय इन्द्र

शिवाचार्य के बन्तेइ क्देइ (Bantay Kdei) अभिलेख में कम्बुज राज हर्षवर्मा द्वितीय को द्वितीयइन्द्र कहा गया है।

युद्ध में द्वितीय इन्द्र के समान - कम्बुज का महान् सम्राट् जयवर्मा[२] पंचम (९६८-१००१ ई०) युद्ध क्षेत्र में अपने धनुष की प्रत्यंचा की टंकार से दिशाओं के मुखों को

---

१- पूर्वी बरे (Eastern Baray) अभिलेख, श्लो० सं० ७२, पृ० ७४।
२-प्रसत् कोम्फुस (Prasat Komphus) अभिलेख, श्लो० सं० १५, पृ० २७५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



परिपूर्ण कर देता और असंख्य वाणों की वर्षा से शत्रुओं को त्रस्त करने वाला था । ऐसे जयवर्मा पंचम को कम्बुज में द्वितीय इन्द्र के रूप में देखा गया ः-

धनुर्ज्याघातघोषेण पूरयन्दिङ्मुखानि यः ।
ववर्ष शरधारौघान् रणे शक्र इवापरः ।।

रणनीति धर्म आदि में - बन् थन् (Ban Than ) अभिलेख के अनुसार सूर्यवर्मा द्वितीय (१११३-५० ई०) कम्बुज का द्वितीय इन्द्र था । आकाश में चतुर्दिक फहराती हुई पताकाओं द्वारा, गगनचुम्बी भेरियों द्वारा, ~~गुनियां~~ ~~के~~ तन्त्री/वाद्यों से उठते हुए मधुरगीतरवों द्वारा और नृत्य करती हुई कामिनियों द्वारा यह सम्राट् इन्द्र की भाँति सुशोभित होता था । यथा-

आकीर्णकेतुनिकरैर्गगनोल्लसद्भिः- रामन्द्रतूर्यनिनदैश्च दिवं स्पृशद्भिः
तन्त्रीमिलन्मधुरगीतरवैश्च नृत्यन्नारीजनैरपि तदैन्द्रमिवावकीर्णम् ।।

कम्बुज राज इन्द्र से बढ़कर

उपभोगों में ः-

कम्बुज में राजाओं को न केवल इन्द्र के नाम से अभिहित किया गया और महेन्द्र के समान बताया गया है, अपितु वहां के अनेक राजाओं को सुरपति से भी अधिक महान् शक्तिशाली एवं विजेता कहा गया है । सम्राट् इन्द्रवर्मा[१] ने अपनी बुद्धि से रचित श्री से युक्त सिंहासन, श्रीन्युक्त इन्द्रयान, श्री-युक्त इन्द्रविमान और स्वर्ण-निर्मित श्री-युक्त इन्द्र-प्रासाद का उपभोग किया था ।

श्रीमत्सिंहासनं श्रीन्द्रयानं श्रीन्द्रविमानकम् ।
श्रीन्द्रप्रासादकं हैमं भेजे यस् स्वधिया कृतम् ।।

---

१- प्रः को (Prah Ko) अभिलेख श्लोक सं० ८, पृ० ६२ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यश में :- यशोवर्मा[१] के यश की चाँदनी दिग्गजों को विजय का समाचार सुनाती थी, सूर्य के तेज को शीतल करती थी और इन्द्र के सहस्र नेत्र-कमलों को जुलाती-# सी वेगपूर्वक विश्व में फैल गयी थी ।

नागाङ्गदन्नुदन्तीव शीतयन्तीव भानुभाम् ।
दहन्तीवेन्द्रदृक्पद्मान् द्रुता यत्कीर्तिचन्द्रिका ।।

विक्रम में - इन्द्र ने तो भगवान् वामन के विक्रम से राज्य प्राप्त किया था, किन्तु इस सम्राट् ने बिना किसी अन्य महापुरुष की सहायता के अपने भुजबल से सम्पूर्ण विश्व पर विजय प्राप्त की थी ।

यस्तु ( तु) ंगमप्यनालम्ब्य ( नि) जभुजजितंजगत् ।
[२]
'''दाप्तराज्यस्तु शक्रो वामन विक्रमात् ।।

विजयिनीकीर्ति -

सम्राट् राजेन्द्रवर्मा कम्बुज का प्रतापी राजा था । राजेन्द्रवर्मा के प्रे रूप् (Pre Rup) शिलालेख के अनुसार इसने अपने पराक्रम के बल पर महती विजय प्राप्त की थी । कवि कल्पना करता है कि इनकी विजयिनी कीर्ति इन्द्र की अपकीर्ति का बखान करती हुई सम्पूर्ण पृथ्वी मंडल में परिव्याप्त होकर आकाश मण्डल की ओर जा रही है :-

प्रत्यादिशन्तीवाकीर्तिमैन्द्रीमिन्द्रजिता क्लताम् ।
यस्य वैजयिकी कीर्तिर्व्याप्योर्व्वी व्यश्नुते दिवम् ।।

यज्ञानुष्ठान में - विजयोपरान्त महाराज राजेन्द्र वर्मा ने अनेक अश्वमेध यज्ञ किये और समस्त भूमण्डल को वैभवों का आगार बना दिया । जैसे इन्द्र ने अपनी विशालवाहिनी द्वारा शत्रुओं का मानमर्दन किया था वैसे ही राजेन्द्रवर्मा अपने अश्वमेध यज्ञों द्वारा शत्रुओं का मानमर्दन करनेवाले हुआ।

---

१- पूर्वी बरे (Eastern Baray) अभिलेख; श्लो० सं० ३३, पृ० १०६।
२- वही; श्लो० सं० २२, पृ० १०५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस प्रकार महाराज की असंख्य यज्ञ रूपी समुद्रों की कीर्ति से वह चन्द्रमण्डल उदित हुआ जिसके सामने इन्द्र की कीर्ति एक साधारण तारे के सदृश भासित होने लगी। यथा-

विधिप्रतिष्ठाकृत्धर्मो भू विभवो भवत्।
यः श्रीराजेन्द्रवर्म्मेन्द्रो इन्द्रदैत्येन्द्रमर्दनः ।।
यस्यासंख्यमखाम्भोधिजन्तु कीर्तीन्दुमण्डलम्।
शतक्रतुयतस्ताराषाण्डुन् दिवमदीपयत् ।।

राज्य कल्याण के संवर्द्धनार्थ सामादि से युक्त उसकी आज्ञा इन्द्र गुरु बृहस्पति के समान थी तथा दिगिन्द्र(आसपास के राजा) उसे शिरोधार्य करते थे।

भुवनोदयसंवर्द्धसामादिविधिशालिनी।
दिगिन्द्रमूर्द्धविधृता यस्याज्ञेन्द्रगुरोरिव[१]।।

दुर्जय, दुर्दमनीय और दारुण शत्रु को इन्द्र की शरण में जाने पर भी मार डालने की प्रतिज्ञा

अंकोर् थोम्(Angkor Thom) के बौद्ध मंदिर प्रः नोक् (Prah Nok) से उदयादित्यवर्मा द्वितीय का अभिलेख प्राप्त हुआ है जिसके अनुसार इन्द्र के समान दुर्दमनीय अरविन्दह्रद नामक व्यक्ति ने दक्षिणापथ में विद्रोह कर दिया।

आसीद् रामाद्रिरन्ध्रैर्य्यो द्विडिन्द्रो दुर्दमो मृधे।
अरविन्दह्रदाभिख्यो दारुणो दक्षिणापथे ।।

कम्बुजराजेन्द्र उदयादित्यवर्मा द्वितीय को अरविन्दह्रद के आक्रमण से बहुत चिंतित देखकर उसके साहसी, वीर एवं पराक्रमी सेनापति संग्राम ने उसको प्रोत्साहित करते हुए कहा था कि उसमें इतनी शक्ति है कि उसका वेग इन्द्रादि देवता भी सहन नहीं कर सकते, तो इन तुच्छ राजाओं की क्या हस्ती है कि वे उसके वेग को सहन कर सकें।

१- बत् चुम् (Bat Cum) अभिलेख, श्लोक संख्या ७८, पृ० २३०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


अपीन्द्रादिसुरा राजन् रणेऽद्भुतपराक्रमा:
त्वच्छरो न सहिष्यन्ते दाणं किमुत जन्तव: ।।

पुन: उसने राजा को शान्तचित्त होकर बैठने की प्रार्थना की और दुर्जय शत्रु को इन्द्र की शरण में जाने पर भी मार डालने की प्रतिज्ञा ली । फिर सम्राट् को बारम्बार प्रणाम करके शीघ्र ही उस स्थल पर गया जहाँ दुर्जय अरीन्द्र था ।

स्वस्थतिष्ठ महाराज त्वत्तरोभिस् सुदुर्जयम् ।
परैपीन्द्रगशरणं निश्चितं नाशयामि तम् ।।
इतीरितस् स सङ्ग्रामनामा भूयो नतोनत: ।
तूर्णं ययौ स सबलो यत्रारीन्द्रोऽतिदुर्जय: ।।

## राजमहिषी और इन्द्राणी

कम्बुज में न केवल राजाओं को ही इन्द्र के समान बताया गया है बल्कि राजमहिषी और इन्द्राणी में भी तद्रूपता दिखायी गयी है।[१] फूनान् के महाराज जयवर्मा की धर्मपरायणा महिषी कुलप्रभावती की समता इन्द्र की इन्द्राणी, अग्नि की स्वाहा, शिव की रुद्राणी तथा विष्णु की लक्ष्मी के साथ की गयी है ।

शक्रस्येव शची नृपस्य दयिता स्वाहेव सप्तार्चिष:।
रुद्राणीव हरस्य लोकविदिता सा श्रीरिव श्रीपते: ।।

## लोकपाल इन्द्र के सदृश कम्बुजराज

कम्बुज नरेन्द्र हर्षवर्मा तृतीय[२] महान् शक्तिशाली, समृद्धिशाली एवं

---

१- नेअक् त- दम्बङ्०देक्(Neak Ta Dambang Dek) अभिलेख; श्लो० सं०४, पृ० २।
२- पल्हल् (Palhal ) अभिलेख; श्लो० सं०८, पृ० ४१२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रजारक्षक था । यह इन्द्र के समान लोकपालक था और अपने राज्य में सम्पत्ति की वर्षा बादलों की भाँति किया करता था ।

> लोकपालो यथेन्द्रो यो विश्वविद्याम्बुवर्षदः ।
> भिन्नभूभृद्गमयो भूमौ बभौ भूभृज्जयध्वजः ।।

## कम्बुज नरेश इन्द्र पुत्र के समान

कम्बुज नरेश जयवर्मा द्वितीय[1] के संबंध में कहा जाता है कि यह इन्द्र के पुत्र के समान था । यह अपने पिता के साथ स्वर्ग गया और वहाँ से एक शिल्पकार के साथ लौटा । यह शिल्पी अप्सरा का पुत्र था । इसने वास्तुकला का प्रशिक्षण इन्द्र-सभा में देवपुत्रों से प्राप्त किया था ।

## इन्द्र से राजा की मैत्री

सम्राट् राजेन्द्रवर्मा के प्रे रूप् ( Pre Rup ) शिलालेख से ज्ञात होता है कि राजा द्वारा किये जानेवाले यज्ञों के अवसर पर इन्द्र जाने के लिए निरन्तर समुत्सुक रहता था । यथा-

> शचीकचे हारि न पारिजात-पुष्पं मखे यस्य सदोत्सुकेन्द्रे ।
> जातंजितारेरमरैर्विमुक्तं संयन्मखे सर्वमिवोपरिष्टात् ।।

## इन्द्र तथा अन्य देवी, देवता

वागीश्वरी और इन्द्र - कम्बुज अभिलेख[2] में वागीश्वरी देवी की स्तुति भी प्राप्त होती है। एक लेख के अनुसार इनके चरणों की प्रभा इन्द्र की मुकुटमणि के संयोग से सुशोभित होती है -

---

१- मजुमदार, आर०सी०: हिन्दू कॉलॉनीज़ इन् दि फार ईस्ट, पृ० १६०।

२-उदयादित्यवर्मा का प्रसत् ख्न (Prasat Khna ) अभिलेख, श्लो० सं०४,ई०३०६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


बन्दे वागीश्वरी ----- जम् ।

नम्रामरेन्द्रमूर्द्धन्यमाणिक्यासंजनादिव ।।

शक्र एवं स्मर - मेकाङ्०नदी के समीप बसाक जिला के वाट्- फू मन्दिर से प्राप्त जयवर्मा प्रथम के अभिलेख में शिवस्तुति में शिवजी द्वारा स्मर-दहन की घटना का उल्लेख है। वहाँ स्मर को शक्रादि देवता को जीतने वाला कहा गया है -

शक्रादिर्विजितो मया मम शरा मोघंगता न क्वचित्

सोऽमधुस् सखा मम सदा वश्यंज नृणांमन: ।।

इत्येवं विगण्य मानसभुवो व्यर्द्धं गतस्तत्क्षणं

यद्रोषेक्षणजातमस्मनिचयो रुद्रेण जेजीयतां ।

यह घटना इन्द्र की सुखवादी प्रवृत्ति का प्रतीक है। इस प्रकार भारतवर्ष के समान कम्बुज में भी इन्द्र को सांसारिक भोगों में लिप्त रहनेवाला समझा गया है।

शिव चरणों में इन्द्र - राजेन्द्र वर्मा के बसाक् (Basak ) शिलालेख में कहा गया है कि महेश्वर के चरणों के नख की प्रभा इन्द्र की मुकुटमणि के संयोग से वैसे ही सुशोभित होती है, जैसे सुमेरु पर्वत प्रात:कालीन सूर्य की रक्तवर्ण किरणों के संयोग से सुशोभित होता है।

वन्दे महेश्वरं यस्य भाति पद नख प्रभा ।

नम्रेन्द्रमौलिहेमाद्रिबाला रुणाविभा निभा ।।

इन्द्रलोक : सं० ७३५के /वात्- तसर् मोरोय् (Vat-Tasan Moroy ) मन्दिर से उपलब्ध अभिलेख में कम्बुज राज ---- के श्री इन्द्रलोक जाने का उल्लेख मिलता है।

इन्द्रलोक नामक उपाधि- सम्बोर अभिलेख[१] के अनुसार शम्भुपुर के राजा पुष्कराक्ष को मृत्यूपरान्त इन्द्रलोक उपाधि से विभूषित किया गया था।

---

१- सैदेस्,जी.: दि इंडियनाइज्ड स्टेट ऑव् साउथ ईस्ट एशिया ; पृ०८५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


## इन्द्रपुर

कम्बुज में नगर को भी इन्द्र के नाम से अभिहित किया जाता था। सम्राट् जयवर्मा द्वितीय[1] ने सर्वप्रथम इन्द्रपुर में अपनी राजधानी की स्थापना की थी।

## यशोधरपुरी की इन्द्रपुरी से समता

सम्राट् राजेन्द्र वर्मा[2] ने यशोधरपुर को अपनी राजधानी बनाया। कहा जाता है कि इसने चिरकाल से सूनी अथवा उजड़ी हुई यशोधरपुरी को चमकीले स्वर्ण गृहों और रत्नमंडित भवनों से पुनः इन्द्र पुरी के समान उसी प्रकार सुसज्जित कर दिया जिस प्रकार महाराज कुश ने अयोध्यापुरी को अभिनव सुसज्जित नगरी बना दिया था।

श्रीमद्यशोधरपुरीं चिरकाल शून्यं
भास्वत्सुवर्ण्णगृहरत्नविमानरम्याम्।
भूयोऽधिकां भुवि महेन्द्र गृहोपमां यो
ऽयोध्यापुरीमिव कुशोऽभिनवांचकार॥

## महेन्द्र पर्वत

कम्बुज में महेन्द्र पर्वत का भी उल्लेख मिलता है। इसकी स्थापना सम्राट् जयवर्मा द्वितीय ने अंकोर के उत्तर पूर्व में लगभग १८ मील की दूरी पर फ्नोम् कुलेन् पर की थी। इसका अभिप्राय लाक्षणिक था। संभवतः जयवर्मा द्वितीय ने गिरिराज होने के लिए एवं विश्व का शासक बनने के लिए एक पर्वत का चयन किया जो देवराज इन्द्र के सिंहासन मेरु पर्वत के समान था तथा उसने अपनी समता भी इन्द्र के साथ स्थापित की थी।[3]

---

१- सिंघल, सुदर्शना देवी : भारत और एशिया के अन्य देश, पृ० १५५।
२- बत् -चुम् (Bat Cum ) अभिलेख, श्लो० सं० १३, पृ० २२३।
३- ग्रॉसलियर; बी० पी०: इण्डोचाइना, पृ०६०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## इन्द्रतड़ाग

प्रः बत् (Prah Bat) शिलालेख में इन्द्रतड़ाग का उल्लेख मिलता है। इसका निर्माण इन्द्रवर्मा ने करवाया था[1]। यह ४,००० गज लम्बा एवं ८५० गज चौड़ा था।

## इन्द्र नामधारी मन्दिर

कम्बुज में सम्राट् को देवत्त्व प्रदान किया गया था। यहाँ के अनेक राजाओं ने अनेक मन्दिरों की स्थापना की थी। कुछ राजाओं ने तो इन मन्दिरों का नामकरण अपने नाम के आधार पर किया है। धर्मपरायण राजा इन्द्रवर्मा के समय यहाँ का राजधर्म शैव था। राजा ने अपने राज्यकाल में बक्रोङ्०में एक शिव- मन्दिर की स्थापना की और उसका नाम `श्री इन्द्रेश्वर' रखा। इसमें सम्राट् ने शिवलिंग की स्थापना की थी। कुछ अभिलेखों में राजाओं द्वारा अपने पूर्वजों की मूर्तियों की स्थापना का उल्लेख मिलता है। यशोवर्मा के शक सं० ८१५ के लोले अभिलेख के अनुसार उसने अपने पूर्वजों के नाम के पश्चात् `ईश्वर' और `देवी' शब्द जोड़कर मन्दिरों की स्थापना की थी। ये मन्दिर `इन्द्रवर्मेश्वर', `इन्द्रदेवी', `महीपतीश्वर' और `राजेन्द्रदेवी' थे। इनमें प्रथम दो नाम यशोवर्मा के माता- पिता के हैं एवं अंतिम दो उनके नाना- नानी के हैं।

## कला में इन्द्र

कम्बुज कला भारतीय प्रभाव से ओतप्रोत है। भारत के समान यहाँ भी कला की प्रेरणा का स्रोत धर्म रहा। शैव, वैष्णव एवं बौद्ध तीनों धर्मों के अतिरिक्त अन्य ब्राह्मण देवी- देवताओं की भी पूजा होती थी। इनमें इन्द्र का प्रमुख स्थान था। यह देवलोक का सम्राट देव भी कहा गया है।

इन्द्र की प्रतिमा इण्डो- ख्मेर स्मारकों में प्राप्त होती है। प्रसत् छो ते अल् तुआ (Prasat Chho Teal Tua) के अलंकृत मेहराब के

---

१- ग्रोसलियर, बी० पी० एच: इण्डोचाइना; पृ० ६५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मध्य में गजारूढ़ आकृति है। ऐसी ही मूर्ति प्रसत् क्रहम् (Prasat Kraham) में मिलती है। इसकी पहचान इन्द्र से की जाती है।[१] वाट्फू (Vat Phu) में इन्द्र बायें हाथ में वज्र धारण किये हुए अपने प्रिय हाथी पर सवार है। प्रसत् नॉङ्० हॉङ्० (Prasat Nong Hong) के तीन अलंकृत मेहराबों में तीन महान् पुरुषों की आकृतियाँ हैं, जिनमें इन्द्र अपने गज पर, शिव अपने नन्दी पर और विष्णु अपने गरुड़ पर दिखाये गये हैं। वात् पखम् (Vat Pakham) के मेहराब पर भी इन्द्र को गज पर बैठा हुआ दिखाया गया है।[१]

फ्नोम् पेन्ह् (Phnom Penh) के राष्ट्रीय संग्रहालय में इन्द्र और विष्णु की दो छोटी कांस्य प्रतिमाएँ हैं। ये संभवतः प्रारम्भिक फूनान् काल (श० ६००-१०० वी०सी०) की हैं।[२] इनमें इन्द्र की प्रतिमा गजासीन है (चित्रसंख्या ६)।

इस प्रकार इण्डो-ख्मेर स्मारकों में सामान्य रूप से इन्द्र की गजारूढ़ मूर्ति का निरूपण हुआ है। बयॉन् (Bayon) के उकेरे हुए भित्ति-चित्रों में बुद्ध की जीवन-गाथाओं, जातक कथाओं, देवों और दैत्यों द्वारा समुद्र-मन्थन का दृश्य एवं शिव के पुत्र तथा देवों के सेनापति स्कन्द[३] को इन्द्र के शत्रुओं के विरुद्ध युद्ध के लिए प्रस्थान करते हुए दिखाया है।

कम्बुज राज-परम्परा के अनुसार राजा अष्ट देवों- इन्द्र, अनिल, यम, अर्क, अग्नि, वरुण, चन्द्र एवं कुबेर- का अंश होता था।[४] यही कारण है कि यहाँ के राजाओं ने अपने नाम के आधार पर मन्दिरों की स्थापना की। अनेक मन्दिरों में वे स्वयं को तथा पूर्वजों को देवता-रूप में प्रतिष्ठापित करते थे।

---

१- बोस, पी०एन०: द हिन्दू कॉलोनी ऑव् कम्बोडिया, पृ० ३४६, ३४८।
२- घोष, एम०: ए हिस्ट्री ऑव् कम्बोडिया, पृ० ४१।
३- वही, पृ० ८२।
४- वही, पृ० ६६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुलेन् पठार पर जयवर्मा द्वितीय के राज्यकाल ८०२ ई० में बहुत से मन्दिरों का निर्माण हुआ। ये मन्दिर उसकी शक्ति और देवत्त्व के स्वरूप की मेरु पर्वत पर राज्य करनेवाले देवों के राजा इन्द्र का प्रतिनिधित्त्व करते हैं।[1]

सम्राट् इन्द्रवर्मा ने बकोङ० में इन्द्रेश्वर नामक शिवमंदिर की स्थापना की थी।[2] इसमें उसने गंगा, उमा, विष्णु, हरिहर, इन्द्र एवं महिषासुरमर्दिनी की प्रतिमाओं की प्रतिष्ठापना की थी।[3]

---ooo---

---

१- फ्रेडरिक, लूइस: द टेम्पल्स एण्ड स्कल्पचर ऑव् साउथ ईस्ट एशिया पृ० २८२।

२- बकोङ० (Bakong ) अभिलेख।

३- घोष, एम: ए हिस्ट्री ऑव् कम्बोडिया, पृ० १२४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

---ooo---

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## तृतीय अध्याय

## चम्पा के राजाओं की इन्द्र से तुलना

चम्पा भी कम्बुज के समान भारतीय संस्कृति से अनुप्राणित है। वहाँ शैव, वैष्णव एवं बौद्ध तीनों भारतीय धर्म फूले-फले हैं। इन धर्मों के अतिरिक्त अन्य ब्राह्मण देवताओं का उल्लेख वहाँ के साहित्य में मिलता है। इनमें अग्नि, इन्द्र, कुबेर, चन्द्र, ब्रह्मा, यम, वरुण, वासुकि एवं सूर्य लोकप्रिय रहे हैं। कुबेर की उपासना धन प्राप्ति और अहितों से रक्षा के लिए की जाती थी। चन्द्र राहु पर विजय प्राप्त करने वाला था। यम मृत्यु का देवता था। इनमें इन्द्र का विशिष्ट स्थान था।

चम्पा में राजा का स्वरूप दैवीय उत्पत्ति के सिद्धान्त पर आधारित था। वह पृथ्वी का देव माना जाता था[1]। अत: चम्पा के कई राजाओं ने अपना नामकरण इन्द्र के नाम पर किया और स्वयं को भी इन्द्र माना। इन्द्र नामधारी राजा-इन्द्रवर्मा, जयइन्द्रवर्मा, पृथ्वीन्द्रवर्मा आदि थे।

### मूर्तिमान् शक्र के समान-

चम्पा के राजा श्री विक्रान्तवर्मा द्वितीय (६८६-७३१)[2] के पो-नगर शिलालेख[3] में उनकी तुलना इन्द्र से की गयी है -

" विक्रान्तवर्म्मा हि नराधिपश्रीर्य्यो मूर्तिमान् शक्र इव ।"

---

१- मजूमदार, आर०सी० : चम्पा, पृष्ठ १५५ ।

२- हाल, डी०जी०ई० : ए हिस्ट्री ऑव् साउथ-ईस्ट एशिया, पृ० १५६ ।

३- पो-नगर अभिलेख (७७५ ई०), श्लोक संख्या २, चम्पा, पृ० ७२ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



कीर्ति, बल, त्याग, क्षमा, धर्म आदि गुणों के कारण इन्द्र इव-

भद्रवर्मा तृतीय (६०५-६११ ई०)[1] चम्पा का योग्य, समृद्धिशाली, वीर, पराक्रमी एवं शक्तिशाली राजा था। इस कारण वह सम्पूर्ण विश्व का शासक माना जाता था। फू-ल्वाङ् (Phu - Luong ) शिलालेख[2] में उसे इन्द्र के समान बताया गया है :-

" श्रीकीर्त्तिसम्पद्बलवीर्यशूर त्यागक्षमाधर्मगुणानुरागैः ।
श्रीभद्रवर्मा पृथिवीश्वरो यं नित्यानुयातो ˘ ˘ - इवेन्द्रः ।।"

पौरुष और विक्रम

इन्द्रवर्मा प्रथम (७८६-८०१ ई०) भाग्यवान्, शक्तिशाली एवं विजेता सम्राट् था। वह अपनी शक्ति, पौरुष, विक्रम एवं सम्पदा के कारण स्वयं को अग्नि, इन्द्र, कुबेर, चन्द्र और यम के समान[3] बताता था।

" स श्रीमान् नृपतिस्सदा विजयते भूमौ रिपोस्सर्वतश्चन्द्रेन्द्राग्नियमस्य
विग्रहमघाधदाधिपस्यौजसा ।"

इन्द्र नामधारी शिवलिंग

चम्पा के अधिकांश सम्राट् शैवधर्मानुयायी थे। कई चम्पाधियों ने अपने नाम के आधार पर मूर्तियों एवं लिंगों की स्थापना भी की थी और उन देव-मूर्तियों को अपने नाम के आगे 'ईश्वर' शब्द जोड़कर अभिहित किया। सम्राट् इन्द्रवर्मा प्रथम ने इन्द्रभद्रेश्वर, इन्द्रभोगेश्वर एवं इन्द्रपरमेश्वर के नाम से शिवलिंगों की स्थापना की थी।

---

१- पुरी, बैजनाथ : सुदूरपूर्व में भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास, पृ० ६०।
२- फू-ल्वाङ् (Phu - Luong ) शिलालेख र०िा० सं० ६, चम्पा, पृ० १२३।
३- याङ् तिकु: (Yang Tikuh ) शिलालेख(७९९ ई०), र०िा०सं०३, चम्पा, पृ० ४५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



" तस्यापि पार्थिवं लिंगं स्थापितं श्रीन्द्रवर्म्मणा ।
इन्द्रभद्रेश्वरो नाम्ना ततश्चाभूत् स एव वा ।।[1]"

" स एव राजा श्रीमान् प्रथमतरन्तावदिन्द्रभोगेश्वरं वीरपुरं स्वयमेव स्थापयेत् तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रदिवसलग्नयोगेन तदनन्तरमिन्द्रभद्रेश्वरमुपस्थापितवान् ।

स भगवानिन्द्रपरमेश्वरस्सकलजगद्धितकारणश्श्रीसत्यवर्म्मणा वरभवनस्थाने स्थापितश्चापि ।[2]"

इन्द्रवर्मा चतुर्थ ने 'इन्द्रवर्मन्-शिवलिंगेश्वर' के नाम से शिवलिंग की स्थापना की थी ।[3]

इन्द्र नामधारी शिवप्रतिमा

इन्द्रवर्मा तृतीय ने 'इन्द्रकान्तेश' नाम से शिवप्रतिमा की स्थापना करवायी थी ।

" भौममकरे मेष भृगुजे श्रीमतीन्द्रकान्तेशम् ।
सातिष्ठिपत् स्वभक्त्या साध्वी श्री इन्द्रवर्मनृपे ।।
श्री त्रिभुवनदेव्याः श्रीः पुण्यानां स्थानमूढकीर्त्तियात् ।
प्रतिमलिंगौ देवो नित्यं श्रीइन्द्रकान्तेशः ।।[4]"

---

१- याङ्ग तिकु: (Yang Tikuh) शिलालेख, श्लो० सं० ८, पृ० ४६।
२- ग्लइ लमोव् (Glai Lamov) शिलालेख (७३३ ई०), वही, पृ० ५३-५४।
३- पो-नगर के अभिलेख ।
४- ह-त्रुङ्ग (Ha-Trung) शिलालेख (८३८ ई०), श्लो० सं० ३-४, वही, पृ० १३७।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सम्राट् जयइन्द्रवर्मा चतुर्थ ने श्रीजयइन्द्रलोकेश्वर, श्रीजयइन्द्रेश्वर और श्रीजयइन्द्रगौरीश्वरी नाम की शिव-मूर्तियाँ मन्दिर में प्रतिष्ठित कराईं तथा उनकी स्तुति में अभिलेख लिखवाये[१]।

इन्द्रपुर

कम्बुज[२] के समान चम्पा में भी 'इन्द्रपुर' नामक नगर का उल्लेख मिलता है। चम्पा-नरेश इन्द्रवर्मा द्वितीय ने (नवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में) इन्द्रपुर में ही अपनी राजधानी बनायी थी। जिसका आधुनिक नाम क्वङ्नम्[३] है। जयसिंहवर्मा प्रथम के डोङ् डुओङ् शिलालेख[४] से भी स्पष्ट होता है कि इन्द्रपुर चम्पा का समृद्धिशाली नगर था। यह सुसज्जित नगर इन्द्र के नगर की ओर संकेत करता था।

"पुरीन्द्रपुरसम्पदाभरित ‒ ⏑ ‒ ‒ ⏑ ता।
सिताम्बुरुहराजिताम्बुरुहिणीविरालंकृता ॥"

देवसभा में इन्द्र

चम्पा के सम्राट् भद्रवर्मा तृतीय का बङ्अन् (Bang An) शिलालेख[५] शिवदरबार का चित्र प्रस्तुत करता है, जिसमें मध्य में शिव बैठे हुए हैं, उनके सामने इन्द्र दायीं ओर, ब्रह्मा, सूर्य और चन्द्र पीछे की ओर एवं नारायण बायीं ओर बैठे हुए दिखाये गये हैं।

---

१- सिंघल, सुदर्शना देवी : भारत और एशिया के अन्य देश, पृ० २२१।
२- कम्बुज में जयवर्मा द्वितीय ने इन्द्रपुर नामक नगर में ही सर्वप्रथम अपनी राजधानी की स्थापना की थी।
३- ग्रूसलियर, बी०पी०एच० : इण्डोचाइना, पृ० १३२ तथा द्रष्टव्य हाल, डी०जी०ई० : ए हिस्ट्री ऑव् साउथ-ईस्ट एशिया, पृ० १६०।
४- चम्पा, पृ० ६६।
५- बङ्-अन् शिलालेख, श्लो० सं० ३, चम्पा, पृ० १२६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"देवेन्द्र: किल पूर्वतोऽस्थित तदा याम्यां सरोजोद्भव-
श्चन्द्रार्काविह पृष्ठतश्च भगवान् नारायणो वामत: ।
मध्यस्थो ज्वलितामरश्मिसहितश्चोंकारपूर्वैस्स्वधा -
स्वाहान्तैर्निजमन्त्रकैस्तुतिनतो योऽसौ तदाद्यै: सुरै: ।।"[1]

लक्ष्मीन्द्रलोकेश्वर

डोङ्० डुओङ्० (Dong Duong ) का प्रसिद्ध विलक्षण विहार चम्पा के महायान बौद्ध धर्म का केन्द्र था । इसकी स्थापना इन्द्रवर्मा द्वितीय ने ८७५ में अपनी राजधानी इन्द्रपुर में करवायी थी । यह विहार लक्ष्मीन्द्रलोकेश्वर को समर्पित था । यह नाम दो हिन्दू (लक्ष्मी और इन्द्र) तथा एक बौद्ध (लोकेश्वर) पद से बना है जिससे यह स्पष्ट होता है कि वहाँ अनेक धार्मिक सम्प्रदायों का समन्वय था[2] ।

चम्पा में इन्द्र की दो मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं । एक मूर्ति त्रा-कियो (Trakieu ) से और दूसरी माइसोन् से प्राप्त हुई है । दो छोटी मानव आकृतियाँ इन्द्र के वाहन गज के साथ दिखायी गयी हैं, जिससे इन मूर्तियों की पहचान इन्द्र से की गयी है[2] । इनमें से एक इन्द्र मूर्ति अपने हाथ में वज्र धारण किए हुए है ।

---ooo---

१- ग्रॉसलियर, बी० पी०एच०: इण्डोचाइना , पृ० १३८ तथा द्रष्टव्य + सैकेल : दि आर्ट ऑव् बुद्धिज्म, पृ० ५५ ।

२- मजूमदार, आर०सी० : चम्पा, पृ० २०१ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## चतुर्थ अध्याय

## बर्मा की लोक-परम्पराओं में इन्द्र

बर्मा पूर्व की ओर भारत का प्रथम मित्र देश है। बर्मा और भारत का सहज भ्रातृत्व धर्म, लिपि, भाषा, साहित्य, संस्कृति और कला में प्रतिध्वनित है। प्रारम्भ से ही वहाँ बौद्ध धर्म का प्राधान्य रहा है ; किन्तु फिर भी बहुत से ब्राह्मण देवी-देवताओं से यहाँ के निवासी परिचित हैं। यहाँ भारतीय देवता शक्र का भी उल्लेख मिलता है जिसे बौद्ध धर्म में ग्रहण कर लिया गया है। बौद्ध धर्म से सम्बद्ध अनेक उत्सव यहाँ धूम-धाम से मनाये जाते हैं। इनमें नववर्षोत्सव हमारी दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

मार्च के प्रारम्भ में जब ऋतु सूखी और गर्म हो जाती है और सम्पूर्ण खेती पककर तैयार हो जाती है, तब उसकी कटाई की जाती है। तत्पश्चात् ताबौङ् की पूर्णिमा का उत्सव मनाया जाता है। यह उत्सव अब बौद्ध उत्सव के नाम से प्रचलित है। किन्तु प्राचीन काल में इसे कृषि-उत्सव ही कहा जाता था। यह अब अप्रैल के मध्य के लगभग होता है। बर्मी कृषक के लिए यह जलवायु कष्टप्रद होती है और वह धान के खेत से पृथक् होकर और जोतने वाले बैलों को विश्राम देने के साथ-साथ स्वयं छुट्टी मनाने को बाध्य हो जाता है। किन्तु वायु का उत्तेजन यह संकेत करता है कि नववर्षोत्सव शीघ्रता से निकट आ रहा है। ज्योतिषियों ने कुछ पत्र प्रकाशित किये हैं, जिनमें नववर्ष का विस्तार से वर्णन है। इस समय देवताओं के अधिपति थग्यमिन् अपने वार्षिक अभ्यागमन में पृथ्वी पर आते हैं। वे यहाँ मनुष्यों के निवास-स्थान में अपने पुराने वर्ष के दो अथवा तीन दिन व्यतीत करते हैं। ठीक उनके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रस्थान के क्षण से नववर्ष का प्रारम्भ होता है। यह उत्सव तीन या चार दिनों में समाप्त होता है। उनके अभ्यागमन का दिन अवतरण-दिवस और उनके देवलोक को प्रत्यावर्तन करने का दिवस प्रस्थान-दिवस कहलाता है। बीच के दो दिनों को निवास-काल कहा जाता है। इन दिनों धर्मपरायण लोग व्रत रखते हैं और अष्ट धर्मोपदेशों अथवा दश धर्मोपदेशों का अनुसरण करते हैं। विहारों और पगोडा में भिक्षान्न देने के लिए जाते हैं।

घरों पर गृहिणियाँ अपने पड़ोसियों को उपहार में देने के लिए ठण्डा पेय पदार्थ और मिठाइयाँ तैयार करती हैं। बच्चों को भी देवताओं के राजा के प्रति अच्छे व्यवहार करने का उपदेश दिया जाता है। थज्यमिन् अपने साथ दो बड़े-बड़े ग्रन्थ लाते हैं। एक ग्रन्थ श्वान के चर्म से बँधा होता है और दूसरा स्वर्ण से। श्वान के चर्म से बँधे ग्रन्थ में वे इस वर्ष के अपराधियों के नाम लिखते हैं और स्वर्ण से बँधे ग्रन्थ में अच्छे कर्म करने वाले व्यक्तियों के नाम लिखते हैं। देवराज के अवतरण और प्रस्थान का संकेत तोप के घोर शब्द और बंदूक की ध्वनि से मिलता है, जिसके ठीक-ठीक समय की गणना और प्रख्यापन ज्योतिष द्वारा किया जाता है। इसकी व्यवस्था वहाँ शासन के प्रबन्धकों की देख रेख में होती है। प्रत्येक गृह के सामने के बरामदे में विशेष प्रकार के फूलों और पत्तियों से भरा हुआ नववर्ष-पात्र देवराज के स्वागत में रखा जाता है। ठीक उनके आगमन के समय गृहस्वामी इस पात्र को उनके प्रति आदर दिखाते हुए आकाश की ओर उठाता है और उनके प्रस्थान के समय वह सौभाग्य, आने वाले वर्ष में अच्छी वर्षा और अच्छी खेती के लिए प्रार्थना करते हुए उस पात्र का जल भूमि पर गिराता है। पति-पत्नी दोनों ही परिवार के स्वामी होते हैं। अत: पति अथवा पत्नी या दोनों इस उत्सव को सरलता, शान्ति एवं पूर्ण मनोयोग से संपन्न करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हृदय में विराजमान उल्लास बाह्य वातावरण में मुखरित विविध वाद्यों में गूंज उठता है। नववर्ष का उत्सव वास्तव में जल का आनन्दोत्सव है। प्रात:काल से युवकों और युवतियों के दल पात्रों में जल लेकर सड़कों के किनारे स्थान ग्रहण कर लेते हैं, मानों वे युद्ध की तैयारी कर रहे हैं। सुसज्जित युवकों एवं युवतियों के समूह आनन्दविभोर हो बाहर निकल आते हैं। विविध प्रकार की मिठाइयों और ठण्डे पेय से पथिकों और अभ्यागतों का सोल्लास स्वागत होता है। कोई भी पैदल यात्री भीगने से नहीं बच पाता, चाहे वह बौद्ध धर्मावलम्बी हो अथवा बौद्धेतर धर्म को न मानने वाला हो, चाहे वह बर्मा का निवासी हो अथवा परदेशी। सभी समान रूप में उत्सव में सम्मिलित होते हैं। केवल संन्यासी, अशक्त और रोगी जल की बौछारों से बचे रहते हैं। प्रसन्न और अलंकृत युवक एवं युवतियाँ अपनी सुसज्जित मोटरें एवं गाड़ियाँ चलाते हुए नगर एवं ग्राम के चारों ओर घुमाते एवं जल फेंकते और स्वयं भीगते हुए लौटते हैं। कभी-कभी युवकों का समूह नारे लगाते और गीत गाते हुए दूसरे युवकों एवं युवतियों के दल पर अधिक जल फेंकने की चुनौती देते हैं। इस आनन्दोत्सव में स्त्री पुरुष का भेद लोग भूल जाते हैं। युवतियों के एक दल को उस युवक को पकड़ने के लिए अवसर दिया जाता है जो उनके ऊपर जल फेंकता है। जब वह पकड़ लिया जाता है तो उसका चेहरा तेल और काजल से काला कर दिया जाता है। उसके दोनों हाथ बाँध दिये जाते हैं और उसे जलसे पूर्ण रूप से बार-बार तब तक भिगोया जाता है जब तक वह बन्दर के सदृश नृत्य करके अपनी हार न मान ले।

तीन दिनों के कोलाहलपूर्ण जल फेंकने और उत्तेजित आनन्दोत्सव के बाद देवावतरण के दिन चतुर्दिक् शान्ति एवं देवभक्ति की ओर उन्मुख करती है। यह साधारण रूप से नववर्ष दिवस कहलाता है,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यद्यपि वास्तव में नववर्ष का प्रारम्भ देव-प्रस्थान के क्षण से ही होता है। लोग अब अपने बालों को वृक्ष की छाल से बने सुगन्धित प्रक्षालक से धोते हैं, सुरभित जल से स्नान करते हैं तथा सर्वोत्तम सिल्क के वस्त्र धारण करते हैं। तब वे पूजा के लिए विहारों एवं पगोडों में जाते हैं। बहुत से लोग मछली मारने वाले मछुओं से जीवित मछलियाँ को खरीदते हैं, उन्हें समीप की किसी नदी अथवा झील में छोड़ देते हैं तथा उनके दीर्घ जीवन के लिए प्रार्थना करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने शिक्षक, माता-पिता, अपने से बड़ों से फूल, फल, मोमबत्ती आदि उपहार में प्राप्त करता है। यह नववर्ष का दिन और जलोत्सव का काल वास्तव में आनन्ददायक है। इसे मंगलमय समझा जाता है। लोग इसमें पंचधर्मोपदेशों को न तोड़ने का प्रयत्न करते हैं और अहिंसा का व्यवहार करने की प्रतिज्ञा लेते हैं।

थग्यमिन् के वार्षिक अभ्यागमन की शताब्दियों पूर्व जो व्याख्या की गयी थी, वह अभी तक याद की जाती है। जब यह पृथ्वी सर्वप्रथम बनी, यहाँ कोई भी जीवित प्राणी न था। ब्रह्मदेव ने अपने निवास स्थान से इस नवीन प्रकार के संसार को देखा और इसका निरीक्षण करने वे नीचे आये। यहाँ की मिट्टी को सुगन्धित पाकर वे एक दो ग्रास खा गये। वह मिट्टी इतनी अधिक स्वादिष्ट थी कि उन्हें और अधिक खाने की इच्छा हुई। अचानक उन्होंने पाया कि उनकी दैवीय शक्ति का ह्रास हो रहा है। वे अपने संसार का अपना महल नहीं देख सकते थे और न वे अपने निवास-स्थान को उड़ कर लौट सकते थे। लेकिन वे सुगन्धित मिट्टी खाते जा रहे थे। शीघ्र ही स्वर्गीय प्रकाश की किरणें उनके शरीर से विलुप्त हो गयीं। पूर्ण अन्धकार छा गया और वे दु:खी होकर भय से तब तक रोते चिल्लाते रहे जब तक देवराज उन्हें सान्त्वना देने नहीं आ गये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तब उनकी प्रार्थना पर नक्षत्रों के देवता ने स्वयं को पृथ्वी से दृष्टिगोचर करने का निश्चय किया। इसी कारण सूर्य और चन्द्र तथा दूसरे नक्षत्र पृथ्वी के देवताओं को प्रकाशित करने के लिए आकाश में दिखायी देते हैं। तब वनस्पति और पशु भी दृष्टिगोचर हुए। देवताओं के अधिपति पृथ्वी के देवों को बहुत आदेश देकर पुनः अपने आवास को लौट गये और प्रत्येक वर्ष के अन्त में आने की प्रतिज्ञा करते गये। इस प्रकार उस समय से थग्यमिन् पृथ्वी पर वार्षिक अभ्यागमन पर आने लगे। यह कथा जगत्-सृष्टि पर आधारित है जो बौद्ध धार्मिक ग्रन्थों में मिलती है।

ऐसा कहा जाता है कि देवराज थग्यमिन् शक्र के अतिरिक्त दूसरे कोई नहीं हैं। हिन्दू धर्म में वे इन्द्र थे, जो वज्र के देवता थे। लेकिन वे शक्र के नाम से संरक्षक देव के रूप में बौद्ध धर्म में ग्रहण कर लिये गये। जब राजकुमार 'सिद्धत' (सिद्धार्थ) भावी बुद्ध ने अपने परिवार एवं राज्य को त्यागने के पश्चात् अपने बाल कटवा दिये और संन्यासी बन गये तब शक्र ने उनके बालों को स्वर्ण-पात्र में लिया। उसे लेकर वे देवताओं के निवास-स्थान पर पहुँचे और उसके ऊपर एक पगोडा का निर्माण किया। सिंहल के प्रामाणिक इतिहास महावंश के अनुसार वे बुद्ध के द्वारा सिंहल में बौद्ध धर्म की संस्थापना एवं विशेष संरक्षक की तरह कार्य करने अथवा उसकी देखभाल के लिए नियुक्त किये गये थे। बर्मी विश्वास के अनुसार जब बुद्ध का निर्वाण-समय समीप था तब उन्होंने यह भविष्यवाणी की थी कि उनका धर्म २,५०० वर्षों तक स्थिर रहेगा। लेकिन शक्र ने उनसे उसे ५,००० वर्षों तक बढ़ाने के लिए कहा और प्रतिज्ञा ली कि वे दूसरे २,५०० वर्षों में अपने वज्र से उसकी रक्षा करेंगे। यद्यपि बर्मी कथा पालि त्रिपिटक और भाष्य,टीकाओं में उपलब्ध नहीं है परन्तु तथापि प्रचलित लोकप्रिय बर्मी परम्परानुसार बर्मा की श्रद्धालु बौद्ध जनता थग्यमिन् को बौद्ध धर्म के संरक्षक देव के रूप में मानती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



थग्यमिन् का अर्थ है राजा जो सब कुछ जानता और सुनता हो। १२वीं शताब्दी के भित्ति-चित्रों में उनको चार आँखों, चार कानों और दो नाकों से युक्त दिखाया गया है। बर्मी लोगों का विश्वास है कि ये देव अच्छे बुरे व्यक्तियों का नाम स्वर्ण-चर्म एवं श्वान-चर्म से बंधे ग्रन्थों में लिखते हैं क्यों कि यह वह राजा है जो सब कुछ जानता और सुनता हो। पालि के कुछ ग्रन्थों में उल्लेख है कि शक्र अच्छे कर्म करने वाले व्यक्तियों के नाम अपने पास रखते हैं। किन्तु वे किस प्रकार इस विवरण को रखते हैं ? इस ~~कथा और~~ सम्बन्ध में बर्मी कथाओं में बहुत अन्तर है। परम्परा है कि पृथ्वी के चार संरक्षक देव और उनके अनुयायी प्रत्येक सब्बत्थ दिवस पर पृथ्वी पर अभ्यागमन करते हैं। वे स्वर्ण ग्रन्थ में मनुष्यों के अच्छे कर्मों को लिखते हैं। इसके बाद वे इस सुनहरे ग्रन्थ को शक्र के संगीतकार को देते हैं, संगीतकार उसे शक्र के सारथी को देता है और सारथी उसे शक्र को देता है। तब शक्र देवताओं की सभा में अच्छे कर्मों का विस्तार पढ़ते हैं। देवगण प्रसन्न होकर सौभाग्य प्रदान करते हैं।[१]

बर्मा में प्राचीन वैष्णव परम्परा वहाँ की प्राचीनतम राजधानी ह्मवज़ या प्रोम् से सम्बद्ध है। तदनुसार यह नगर एक ऋषि द्वारा स्थापित किया गया है। बर्मा के ऐतिहासिक ग्रन्थ महायज़विन्[२] में इस नगर की स्थापना के सम्बन्ध में लिखा है कि इस आयोजन के मुख्याधिकारी ऋषि की छह दूसरे देवों ने सहायता की थी ; जिनके नाम इस प्रकार हैं-- गवाम्पति,

---

१- ऑङ्०, एम०एच० : फोक् एलिमेण्ट्स इन् बर्मीज बुद्धिज्म, पृ० २३-२४।

२- यह ऐतिहासिक और साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण ग्रन्थ उ-काल नामक लेखक के द्वारा १८ वीं शती के पूर्वार्द्ध में लिखा गया है। बर्मा के ऐतिहासिक ग्रन्थों के लिए देखिए लेख 'माडर्न हिस्टारिकल राइटिंग इन् बर्मीज़, १७२४-१९४२,' हिस्टोरियन्स् ऑव् साउथ ईस्ट एशिया, पृ० ८५-९३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन्द्र, नाग, गरुण, चण्डी और परमेश्वर। नगर की स्थापना या मन्दिरों के निर्माण के सम्बन्ध में बर्मा की पौराणिक कथाओं में अधिकांश स्थानों में गवाम्पति, इन्द्र और नाग या नागराज का उल्लेख मिलता है।

बर्मा की पौराणिक कथाओं से यह निश्चय करने में सहायता मिलती है कि नगर की स्थापना मन्दिर के निर्माण और चित्र बनाने की परम्परा का मूलाधार भारतीय विधि है।

ऐसा समझा जाता है कि इन्द्र देवताओं का राजा है जिसका सभी महत्वपूर्ण आयोजनों में उपस्थित होना आवश्यक है। महायज्ञविन् परम्परा सम्भवत: तलैङ्० के ग्रन्थों से ली गयी है। किन्तु यह केवल वर्णन ही है कि ऋषि नगर के संस्थापक थे। उसमें ऋषि के नाम का उल्लेख नहीं है। प्राचीन ग्रन्थों में खिसित् या श्रीक्षेत्र की स्थापना की कथा कम या अधिक विस्तार से दी गयी है।

श्वेज़िगान् पगोडा के अभिलेख के अनुसार, भगवान् बुद्ध मुस्कराये और आनन्द ने उनके मुस्कराने का कारण पूछा। भगवान् बुद्ध ने आनन्द को बताया कि एक सन्त विष्णु है वे महान् दैवी शक्ति से सम्पन्न और कीर्तिमान् हैं। इनके अधिकार में पाँच बड़े-बड़े विभाग हैं। उनके साथ उनका पुत्र गवाम्पति, राजा इन्द्र, विश्वकर्मादिवपुत्रादि हैं जो सिसित् (श्रीक्षेत्र) नगर का निर्माण करेंगे।[१]

ऐतिहासिक ग्रन्थों में उल्लेख मिलते हैं कि शक्र प्रोम् नगर के बनाने वाले सात देव शिल्पियों में से एक थे। बर्मी इतिहास के सुविख्यात

---

१- रे, एन०आर० : ब्राह्मनिकल् गॉड्स इन् बर्मा, पृ० १६-१७।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


महाराज अनिरुद्ध के पिता को पगन् की राजगद्दी प्राप्त करने में इन सात देवों ने सहायता की थी । नवीन बर्मी राजधानी पगन् में बौद्ध धर्म के अत्यधिक उत्कर्ष में भी इन देवों का हाथ था । पराक्रमी वीर अनिरुद्ध को अपने पिता से विजय-दण्ड मिला था, जिसे उसके पिता ने शक्र से प्राप्त किया था । अनिरुद्ध पड़ोसी देशों की कथाओं और इतिहास में भी प्रसिद्ध था । उदाहरण के लिए मरकत मणि बुद्ध विहार(एमरैल्ड बुद्ध टैम्पल) में थाई इतिहास के अनुसार अनिरुद्ध इस विजय-दंड के साथ थाई देश आये थे [१] ।

अनिरुद्ध के राज्यारोहण के समय उत्तरी बर्मा में ३६ राष्ट्रीय 'नाट्' थे । महागिरि उनमें प्रमुख था ।इन ३६ देवताओं की पूजा राज्य में की जाती थी । भूत-प्रेतों में विश्वास और अन्धश्रद्धा का प्रचलन था । राजा ने इसका विरोध किया । किन्तु उसने देखा कि इन ३६ देवताओं के प्रति लोगों की दृढ़ास्था है जिसे दबाना कठिन है । अत: उसने इनमें कुछ संशोधन कर दिये । ३६ देवों के स्थान पर ३७ देवों की पूजा प्रारम्भ की गयी । ३७ वाँ देव थग्यमिन् (शक्र) था, जो देवराज और बौद्ध धर्म का संरक्षक देव था । अब थग्यमिन् अर्थात् शक्र और महागिरि प्रमुख स्थानों पर थे [२] ।

बर्मा में मिङगन्, शिन्ब्यूमे (Mingan, Shinbyume) पगोडा म्य थीन् दव् (Mya Thein Daw ) के नाम से भी जाना जाता है ।

---

१- ऑङ्०, एम०एच० : ब्राह्मनिकल् गॉड्स् इन् बर्मा, पृ० ३३ ।

२- वही, पृष्ठ ७३-७५ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसके चारों ओर सात टीले बने हैं जो सात पर्वतों से घिरे इन्द्र के स्वर्ग त्रयस्त्रिंश की प्रतीति दे रहा है। इस स्मारक को बग्यिदव् ने राज्यारोहण के कुछ ही पहले अपनी प्रथम पत्नी की स्मृति में १८१६ में बनवाया था। चार सीढ़ियों की श्रेणी केन्द्रीय पगोडा के नीचे की ओर ले जाती है जो एक छोटे पगोडा से घिरा है। यह १८३८ के भूकम्प ने नष्ट हो गया और १८७४ में इसका पुनरुद्धार राजा मिण्डॅन् के द्वारा हुआ।[१]

बर्मा का मण्डले अरकन् पगोडा का शिव शीर्ष प्राय: अविदित है। यह अद्भुत सिर छह बड़ी-बड़ी कांस्य प्रतिमाओं के समूह का एक अंश है। ये छह प्रतिमाएँ हैं दो पुरुषदेवता, तीन शेर और ऐरावत, जो इन्द्र का तीन सिर वाला गज था। यह मूर्ति-समूह म्रोहाउङ्० से १७८४ ई० में राजा बोदव्पय के पुत्र द्वारा उस समय लायी गयी थी जिस समय उसने "अरकन्" को जीता था।[२]

===ooo===

---

१- फ्रेडरिक्, लूइस : द टेम्पुल एण्ड स्कल्प्चर ऑव् साउथ-ईस्ट एशिया, पृ० १२६।

२- वही, पृ० २६० ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## पञ्चम अध्याय

# थाइ जातकों में इन्द्र

बर्मा के पश्चात् थाइदेश दक्षिण-पूर्व एशिया का दूसरा प्रमुख देश है। १४ वीं शती तक थाइ निवासी युन्नान् (चीन के दक्षिण) तक ही सीमित न रह कर धीरे-धीरे दक्षिण में बढ़ने लगे थे। सौ वर्षों में ही इनके वीर राजाओं ने बर्मा, कम्बुज, लाओस् और मलाया के भू-भागों पर अधिकार कर विस्तृत थाइ राष्ट्र का निर्माण किया। सुखोदय (सुखोथाइ) थाइ राष्ट्र के संस्थापक के नाम इन्द्र विशेष ध्यानाकर्षित करता है। बङ्‌क्लङ्‌ताओ द्वारा जिसका राज्याभिषेक के उपरान्त का संस्कृत नाम श्री इन्द्रपत-इन्द्रादित्य था, सुखोथाइ के थाइ राज्य की स्थापना थाइ इतिहास की प्रमुख घटना है। उसके पुत्र रामखम्हेङ् के प्रसिद्ध शिलालेख में उसका संक्षिप्त नाम इन्द्रादित्य है।[1]

थाइदेश का प्रमुख धर्म बौद्ध धर्म रहा है। आज भी थाइदेश बौद्धधर्म के हीनयान संप्रदाय का अनुयायी है, यद्यपि शैव और वैष्णव धर्मों का भी प्रभाव यहाँ बना रहा है। कुछ प्रमुख ब्राह्मण देवता भी अपना लिये गये हैं। इनमें इन्द्र उल्लेखनीय है।

बौद्ध धर्म में जातक कथाओं का ऊँचा स्थान है। इनका चित्रण सभी बौद्ध देशों में पाया जाता है। ये जातकदृश्य भक्तों को पुनः-पुनः बुद्ध के उपदेशों को स्मरण दिलाने एवं बुद्ध के प्रति आकर्षित करने में सहायक होते हैं। थाइदेश के रमणीक विहारों में यत्र तत्र जातक-

---

१- पालि रचनाओं में इसे रोचराज या सुरंग कहा गया है। देखिए ल मे, रेजिनल्ड : ए कान्साइज हिस्ट्री ऑव् बुद्धिस्ट् इन् स्याम, पृ० ११२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कथाएँ अंकित हैं । किन्तु ये सभी जातक-कथाएँ पुस्तक के रूप में प्रकाशित नहीं हो सकी हैं । केवल ' टेन लाइव्ज ऑव् द बुद्ध ' नामक एक ऐसी पुस्तक उपलब्ध है जिसमें १० जातक-कथाएँ रंगीन चित्रों सहित दी हुई हैं । इन जातकों में कई में इन्द्र या शक्क (शक्र) का भी उल्लेख मिलता है ।

निमि जातक[1] में निमि त्रयत्रिंश (थाइ त्तवस्तिंश) स्वर्ग में देवताओं को उपदेश देते हैं । वे बहुत से नरकों में अभ्यागमन करते हैं । स्वर्ग और नरक समानान्तर रूप से टेढ़ी-मेढ़ी रेखा द्वारा विभक्त हैं । निमि अपने ऊपर से नरक के प्राणियों की ओर संकेत करते हैं, जो मनुष्यों के नरक ही में प्रेत के रूप में दिखाई पड़ते हैं । अन्धकारपूर्ण संसार में रहने वाले और दुःख भोग रहे ये प्रेतात्मा निमि और सुनहरे रथ से आते हुए प्रकाश के कारण चकित हो जाते हैं । शक्क-स्वर्ग पृथ्वी और नरक से परे है, जहाँ उड़ते हुए और बैठे हुए देवता क्रम से आबद्ध हैं । वे निमि की प्रतिष्ठा में करबद्ध हैं । लाल पृष्ठ भाग में गिरते हुए तीन पंखुड़ियों वाले फूल चित्रित हैं, जो अयुथय काल (अयोध्या काल) के स्वर्ग को चित्रित करने के प्रकार हैं । फूल आशीर्वादों की प्रतिपत्ति को निरूपित करते हैं । शक्क, ब्रह्मा और दो अन्य मूर्तियाँ निमि के नीचे फूलों के सामने घुटने के बल झुकी हैं (चित्रसंख्या ८)

चन्द्रकुमार जातक[2] में शक्क बलिदान सम्बन्धी छाता तोड़ता है और पापमय धार्मिक आयोजन समाप्त करता है । यहाँ शक्क के प्रभामण्डल के स्थान पर वृत्त बनाया गया है । वह धार्मिक छत्र को

---

१- रे, रोजेनफील्ड और बैले : टेन लाइव्ज ऑव् द बुद्ध, पृ० ४७ ।

२- वही, पृ० ७५ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपनी मुग्दरी से मारता है, और बलिदान के पशु एक चबूतरे पर बैठे हुए रोते हैं। बैल पिछले पैरों पर खड़े हो जाते हैं और जैसे ही उनकी मुक्ति का समय निकट आता है, वे झगड़े के लिए प्रस्तुत रहते हैं। दाहिनी ओर ग्रामीणों की भीड़ श्वेत वस्त्रधारी अधम ब्राह्मण का पैर और कमर उसे मारने के लिए पकड़े हुए है और अन्य लोग राजा के मण्डप की ओर दौड़ते हैं जिसमें राजा खण्डहाल के विचारानुसार ब्राह्मण और उसके कार्य को नष्ट कर दें (चित्रसंख्या ९)।

वेस्सन्तर जातक[१] में शक्क फुसति से पृथ्वी पर जाने और वेस्सन्तर को जन्म देने के लिए कहता है। त्रयत्रिंश स्वर्ग में उपधान वाले सिंहासन पर बैठा हुआ शक्क बोधिसत्त्व वेस्सन्तर की भावी माता होने के लिए फुसति को आमन्त्रित करता है। शक्क धार्मिक उपदेश देने के लिए एक हाथ उठाये हुए ऊपर बैठा है और नीचे फुसति उसके प्रति सम्मान की मुद्रा में करबद्ध है। अनेक प्रकार के फलों से लदे वृक्षों से घिरा और सुन्दरी परिचारिकाओं से सेवित स्वर्ग पार्थिव राजा के दीवारों से घिरे महल के प्रांगण से यत्किंचित् समता रखता है (चित्रसंख्या १०)।

दूसरे स्थान पर शक्क मद्दी को पूछने के लिए अवतरित होता है। वेस्सन्तर शक्क की ओर देखते हैं और यह अनुभव करते हैं कि उनसे यह कहा जायेगा कि वे अपनी बहुमूल्य अधिकृत वस्तु पत्नी को त्याग दें। मुनि का आश्रम विशिष्ट प्रकार के श्रेणीबद्ध घरों का समूह है, जिनमें चीनी ढंग की वक्राकार छत, भीतरी और[२] बाहरी दरवाजे तथा अद्भुत पत्थर एवं बाहरी भाग रेखाचित्रों से बने हैं (चित्रसंख्या ११)

१- रे, रोजेनफील्ड और बेले : टेन लाइव्ज आव् द बुद्ध, पृ० ६४।

२- वही, पृष्ठ १००।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



बैंकाक का विशिष्ट आकर्षण वाट् सुथाट् थेप् वराराम है। इसका निर्माण कार्य राम प्रथम से प्रारम्भ होकर राम तृतीय के समय (१६ वीं शती के पूर्वार्द्ध) में पूर्ण हुआ। यहाँ दो प्रमुख भवन हैं। एक उत्तराभिमुख विहार है और दूसरा ऊँचा उठता गया पूर्वाभिमुख बोत्, जो विहार के दक्षिण में है। इसके भव्य किवाड़ों पर द्वारपाल इन्द्र सुशोभित हैं।[१]

===ooo===

---

१- सिंघल, सुदर्शना देवी : भारत और एशिया के अन्य देश, पृ० ६४४।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

# षष्ठ अध्याय

## द्वीपान्तर के कवि काव्यों, दार्शनिक साहित्य एवं बालि के स्तोत्र साहित्य में इन्द्र

भारत और इण्डोनेशिया के शतियों के सम्पर्क जावी साहित्य के रूप में प्रस्फुटित हुए। इण्डोनेशिया की भाषाओं और उपभाषाओं की संख्या लगभग २५० है,[१] विद्वान् गोण्डा ने जिन्हें १६ वर्गों में विभक्त किया है। किन्तु साहित्यिक दृष्टि से जावा, मदुरा, सुण्डा, बालि, सुमात्रा, मलय की भाषाएँ प्रमुख हैं। इनमें भी प्राचीनतम तथा साहित्यिक कृतियों की दृष्टि से जावा की भाषा का विशेष महत्त्व है। प्राचीन जावी भाषा `कवि' कहलाती है। १५ वीं शती के पश्चात् इसमें परिवर्तन हुए और यह `मध्य जावी' कहलायी। १६वीं, २० वीं शती की भाषा `नई जावी' कहलाती है। आज इण्डोनेशिया की राष्ट्रभाषा `बहासा इण्डोनेशिया' सर्वाधिक बोली जाने वाली मलय भाषा है।

कवि भाषा का वाङ्मय विशाल एवं सर्वगुण सम्पन्न है। भारतवर्ष के लिए यह बन्धुसाहित्य है।[२] कवि की प्राणदायिनी भाषा संस्कृत है। कवि अपनी शैली, विचारप्रणाली, धर्म, स्मृति, दर्शन, उपाख्यान, नीति इत्यादि नानाविध शाखाओं में संस्कृति से पोषण प्राप्त करती रही है। संस्कृत शब्दों को इसने ( अपने जैसे काव्य के लिए `ककविन्' शब्द सर्वमान्य है (क- कवि - अन्)) उपसर्ग मध्यसर्ग एवं प्रत्यय लगाकर

---

१- गोण्डा, जे० : संस्कृत इन् इण्डोनेशिया पृष्ठ ६।

२- शारदा रानी : वृतिशासन की प्रस्तावना, पृष्ठ १६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आत्मसात् कर लिया है। महाभारत और रामायण जैसे भारत के जनजीवन में समायें हैं उसी प्रकार द्वीपान्तर में भी। अर्जुन, भीम, युधिष्ठिर, घटोत्कच, देवी कुन्ती, इन्द्र जैसे अनेक महाभारत के पात्र इण्डोनेशिया के छाया नाटकों 'वायाङ्' के लोकप्रिय नायक हैं।

इन्द्रविजय ककविन्[1]

रामायण और महाभारत कवि साहित्य के उपजीवन रहे हैं। 'इन्द्रविजय ककविन्' की कथा महाभारत के उद्योगपर्व से ली गयी है। इस ककविन् का प्रारम्भ सुरबंधुओं और अप्सराओं के सौन्दर्य वर्णन से होता है जिन्हें इन्द्र ने त्वष्टा के पुत्र त्रिशिर की कठोर तपस्या को भंग करने के लिए भेजा था। इस प्रयास में वह तीन बार विफल हुआ। अन्त में उसने तक्षा[2] को अन्यायपूर्वक युद्ध करने की आज्ञा दी। पुत्र त्रिशिर की असमय हत्या से क्षुब्ध पिता ने इन्द्र के वध के लिए वृत्र की उत्पत्ति की। इन्द्र विष्णु की शरण में गया। यह वृत्रासुर अन्त में धोखे से मारा गया। इस पाप के कारण इन्द्र को स्वर्गलोक छोड़ देना पड़ा[3]। इसप्रकार उसका ऐश्वर्यशाली सिंहासन रिक्त हो गया। नहुष को स्वर्ग का शासक बनाया गया। किन्तु वे केवल स्वर्ग के राज्याधिकार से सन्तुष्ट नहीं हुए। उन्होंने इन्द्र की पत्नी (शची) को भी अधिकृत करना चाहा। भयभीत महिषी बृहस्पति के पास गयी। देवगुरु नए स्वर्गाधिपति के इस अधर्मकृत्य के विरुद्ध थे। शची रात्रि नामक स्त्री की

---

१- संस्कृत छन्दों में कवि भाषा (डच विद्वानों ने इसे प्राचीन जावी कहा है) में लिखे गये काव्य 'ककविन्' कहलाते हैं।

२- कवि उद्योगपर्व में विश्वकर्मा के स्थान पर 'तक्षा' नाम है।

३- कवि भाषा में लिखा अगस्त्यपर्व में कथा है कि दक्ष की तेरह कन्याओं के काश्यप के साथ विवाह के पश्चात् देवों और दैत्यों की उत्पत्ति की कथा दी गयी है। हिरण्यकश्यपु के पुत्र प्रह्लाद के वंश का भी वर्णन है। इसके पश्चात् मरुत् की हत्या करने के पश्चात् इन्द्र अपने ब्रह्महत्या अथवा भ्रूणहत्या के पाप को दूर करने के लिए स्वर्ग को जाता है। ब्रह्महत्या इन्द्र का पीछा करती है। सरकार, एच०बी० : इण्डियन इन्फ्लुएन्स ऑन् द लिटरेचर ऑव् जावा एण्ड बालि, पृ० ३३२।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



सुरक्षा में इन्द्र के शयन-गृह में गयी । इन्द्र ने सलाह दी कि यदि नहुष वाहन ढोने वालों के स्थान पर ऋषि-मुनियों को नियुक्त कर दे तो संन्यासी उनसे अप्रसन्न हो जायेंगे । उनके शाप से नहुष का पतन अवश्यम्भावी है । जैसा इन्द्र ने कहा था वैसा हुआ । अगस्त्य मुनि के शाप से नहुष स्वर्गच्युत हुए । इन्द्र पुन: देवराज पद पर सुशोभित हुआ[१] ।

कवि उद्योगपर्व १९७ अध्यायों में ११वीं श० के प्रारम्भ में लिखा गया ग्रन्थ है । यद्यपि इसकी संस्कृत बहुत शुद्ध नहीं है किन्तु सामान्य रूप से कथा में प्रवाह बहुत अधिक है । कृष्ण ने दुर्योधन को गोपालों की पूरी सेना देने का वचन दिया तथा स्वयं अर्जुन के सारथ्य को स्वीकार किया शल्य के मन में भी पाण्डवों के पक्ष में जाने की इच्छा हुई, परन्तु कौरवों ने उनको इतना सम्मान दिया था कि वहाँ से हटना उसके लिए सम्भव न था । फिर भी उसने पाण्डवों का ध्यान इस सम्भावना की ओर आकर्षित किया कि वह युद्ध में कर्ण को धोखा देगा । इसी संदर्भ में उसने इन्द्रविजय की कहानी सुनायी जिसमें सत्य की विजय और अन्याय का पतन दिखाना था । उद्योगपर्व में यह कथा संक्षेप में दी हुई है । इस छोटी सी उपकथा को कवि ने 'इन्द्रविजय ककविन्' में काव्य का बृहद् रूप दिया ।

<u>सुदामल</u>

प्राचीन जावी अर्थात् कवि साहित्य में उपलब्ध इन्द्र की कथाएँ भारतीय कथाओं पर आधृत हैं । इन्द्र की बहुत अधिक निष्ठायुक्त न मानने के कारण परवर्ती मध्य जावी साहित्य में विशेष कर इन्द्र के चरित्र का यह दूषित रूप कहीं-कहीं कथाओं में दिखाया गया है । उदाहरणार्थ

---

१- सरकार, एच०बी० : इण्डियन इन्फ्लुएन्स ऑन् द लिटरेचर ऑव् जावा एण्ड बालि, पृ० २७६।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



मध्य जावी में लिखे गये "सुदामल" तथा इसी कथा को आगे बढ़ाने वाले ~~श्री~~ ~~क~~श्रीतञ्जुङ्० नामक काव्यों का उल्लेख यहाँ अप्रासंगिक नहीं होगा। सुदामल काव्य का प्रारम्भ रोचक है। शिव के शाप से राक्षस रूप को प्राप्त दुर्गा को सहदेव शाप मुक्त कराता है। दुर्गा के आदेश से शुद्धमल सहदेव तम्बपेत्र नामक राजा के पास जाता है। वहाँ राजा को आँखों की ज्योति देकर उसकी पुत्री से विवाह कर लेता है। इसके आगे की कथा श्रीतञ्जुङ्० नामक काव्य में है। सहदेव की अनन्य सुन्दरी का विवाह नकुल-पुत्र सिद्धपक्ष से होता है। सिद्धपक्ष इसको मार देता है, क्योंकि उसकी धारणा थी कि इन्द्र के स्वर्ग में रहते हुए इन्द्र के साथ उसका अनुचित सम्बन्ध था[१] इत्यादि।

भोमकाव्य

जावा का प्रसिद्ध भोमकाव्य कामेश्वर द्वितीय के काल का है। इसमें भोम (या भौम ) का उल्लेख है। वह "पृथ्वी का पुत्र" विष्णु के द्वारा पृथ्वी से उत्पन्न हुआ है, जो एक दानव है। इसने स्वर्ग के देव इन्द्र के विरुद्ध युद्ध किया और उनपर विजय प्राप्त की। अन्त में इसकी मृत्यु कृष्ण के हाथों से हुई[२]।

## इन्द्र : द्वीपान्तर के दार्शनिक साहित्य में

सप्त लोकों का वर्णन द्वीपान्तर के शैव साहित्य के अनेक ग्रन्थों में मिलता है। ~~सं~~ ह्यं तत्वज्ञान[३] में "भुवनशरीर" में सबसे ऊपर

---

१- सरकार, एच०बी० : इण्डियन इन्फ्लुएन्स् ऑन् ~~द~~ द लिटरेचर ऑव् जावा एण्ड बालि, पृष्ठ ३३६।

२- फ्रेडरिक, आर० : ~~द~~ द सिविलाइजेशन एण्ड कल्चर ऑव् बालि, पृ०२५ तथा द्रष्टव्य मजूमदार, आर०सी० : सुवर्णद्वीप भाग २, पृ० ७०।

३- कवि ग्रन्थ सं ह्यं तत्वज्ञान, कण्डिका १८(सम्पादिका-सुदर्शना देवी सिंघल, शतपिटक माला ग्रन्थ २३, नई दिल्ली १९६२)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



सप्तलोक और उसके नीचे सप्त पाताल है। भुवर्लोक सब तत्वों का संग्रह है। सप्त पर्वत, पृथ्वी, सप्तार्णव-आप:, सप्तद्वीप-तेज और दशेन्द्रियाँ आकाश हैं। द्वीपान्तर के शैव दर्शन के उपलब्ध कवि ग्रन्थों में प्राचीनतम, बृहत्तम और महत्वपूर्ण हस्तलेख 'भुवनकोष'[1] के अनुसार त्रैलोक्य का वर्णन उल्लेखनीय है। भूर्लोक में सप्त द्वीप, सप्त पर्वत, सप्तपाताल सम्मिलित है। भुवर्लोक में सूर्य, चन्द्र, भौम, बुद्ध, गुरु, शुक्र, शनैश्चर तथा राहु और धूमकेतु अर्थात् नक्षत्र, तारामण्डल और आकाश हैं। स्वर्लोक शक्रमण्डल है। इन तीनों को त्रैलोक्य कहा गया है। 'भुवनकोष' में सप्तलोकों के शरीर में स्थान, देवता, मन्त्र, वर्ण और विशेषताएँ दी हुई हैं। यहाँ भुवनत्रय सम्बन्धी सामग्री उद्धृत है।

| | | देवता | वर्ण | बीजमन्त्र | न्यास | प्रकृति |
|---|---|---|---|---|---|---|
| भूर्लोक )<br>भुवर्लोक )<br>स्वर्लोक ) | भुवनत्रय | इन्द्र | रक्त | अं ओं[2] अं नम: | नाभि | पंचमहाभूत |

इसी ग्रन्थ में आगे पृथवी और आप: भूर्लोक से, वह्नि और वायु भुवर्लोक से, आकाश और मन स्वर्लोक से उद्भूत हैं। एक अन्य कवि शैव ग्रन्थ 'भुवन-संक्षेप'[3] के अनुसार त्रिलोक इस प्रकार है-

---

१- कवि हस्तलेख भुवनकोष। यह लाइडेन विश्वविद्यालय के संग्रह में सुरक्षित लोम्बोक-संग्रह का लोन्तार (ताड़पत्र ग्रन्थ) है। इसकी संख्या Cod. Or. 5022 है।

२- सप्तलोकों को पंचपद कहा गया है। इन पंचपदों का क्रम अ त स ब इ है। ये पाँचों पंचब्रह्म शिव के बीजाक्षर है। अ = अघोर, त = तत्पुरुष, स = सद्योजात ब = वामदेव, इ = ईशान। ई = सत्यलोक। शैव ब्रह्माण्डवर्णन में त्रिलोक अर्थात् अं 'अघोर' शिव हैं।

३- भुवनसंक्षेप, श्लोक ७९ पर विस्तृत टिप्पण देखिए, सम्पादिका सुदर्शना देवी सिंघल। ग्रन्थ शीघ्र ही प्रकाशित हो जाएगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



| | | |
|---|---|---|
| भूर्लोक | नाभि | मानुषलोक |
| भुवर्लोक | पेट | चन्द्रादित्यलोक |
| स्वर्लोक | हृदय | विष्णुलोक |

सृष्टि सम्बन्धी एक अन्य शैव ग्रन्थ 'सप्त-भुवन'[१] हस्तलेख पृष्ठ संख्या १११ पर सप्तलोक या सप्तभुवनों में प्रथम तीन इस प्रकार हैं--

| | |
|---|---|
| भूर्लोक | मनुष्यलोक है । |
| भुवर्लोक | नवग्रहलोक है । |
| स्वर्लोक | देवलोक है । |

विद्वान् प्राध्यापक जे०गोण्डा ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'संस्कृत इन् इण्डोनेशिया' पृष्ठ ३४३ पर केन्द्रन्[२] (क-√इन्द्र-अन्) शब्द का अर्थ इन्द्रलोक और उसका सामान्य रूप से प्रचलित अर्थ देवलोक दिया है ।

कवि ग्रन्थ 'भुवन-कोष' में पृथ्वी, वरुण, सूर्य, वायु, भीम, विष्णु, प्रजापति और मैत्री का वर्णन करने के पश्चात् हाथ का गुण 'पकड़ना' और उसका देवता 'इन्द्र'[३] माना है । उसी प्रकार स्वर का गुण 'बोलना' और देवता 'वैश्वानर', मन का गुण 'संकल्प और विकल्प करना' है तथा उसके देवता सोम हैं इत्यादि ।

---

१- हालैण्ड के लाइडन् पुस्तकालय के संग्रह में इस हस्तलेख की संख्या Cod. Or. 3948 (6) है । 'सप्तभुवन' नामक ग्रन्थ पृ० ८८ से ११६ तक है । यह बालिद्वीप में लिखा कवि भाषा में द्वीपान्तर का दार्शनिक ग्रन्थ है ।

२- क-√-अन् प्रत्यय कवि भाषा में स्थानवाची है । यथा क्षत्रियन् = क्षत्रिय का निवास ।

३- द्रष्टव्य है - Zieseniss, A.: Studien Zur Geschichte Des Çivaismus, Die Çivitischen Systeme in Der Altjavanischen Literature I; BKI, 98, p. 104.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## स्तोत्र साहित्य में इन्द्र

द्वीपान्तर का स्तोत्र साहित्य संस्कृत से ओत-प्रोत है। १५ वीं शती से लेकर इस साहित्य की सुरक्षा और संवर्धन का श्रेय बालि द्वीप को है। यह स्तोत्र साहित्य पूजा का अंग है।

यह स्तुति साहित्य बहुत विशाल है और इसमें शिव, विष्णु, बुद्ध जैसे प्रमुख देवताओं के साथ-साथ अन्य देवताओं के स्तवन भी उपलब्ध हैं। पूजा में इन्द्र का विशिष्ट स्थान है। इस स्थान के कारण वे कई शैव स्तुतियों, पितृ-पूजा, सरस्वती पूजा, दुर्गास्तव, द्वादशादित्यस्तव आदि में मिलते हैं। यहाँ कुछ विस्तार से इसपर प्रकाश डालेंगे।

## इंद्राणी

### ऐशान्य में इन्द्राणी

इन्द्र के साथ-साथ इन्द्राणी भी महत्वपूर्ण स्थान रखती है। शैव पुजारी, जिसे पदण्डा कहते हैं, 'शिवाम्भ' बनाता है। 'शिवाम्भ' बनाने की पूजा प्रक्रिया में पण्डित या पुजारी पात्र में रखे हुए जल में अष्टदल बनाता है। गन्ध और बीजाक्षत छिड़कते हुए पदण्डा इस मन्त्र के द्वारा महापद्म को अर्घ्य देता है, इन्द्राणी का स्थान ऐशान्य दिशा में है।

---

१- होइकास, सी० : सूर्य सेवन, पृष्ठ ५५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ओँ ब्राह्मी विचेत् स्वाहा पूर्व ।
ओँ कौमारी विचेत् स्वाहा उत्तर ।
ओँ वाराही विचेत् स्वाहा आग्नेय ।
ओँ चामुण्डी विचेत् स्वाहा नैऋत्य ।
ओँ महेश्वरी विचेत् स्वाहा दक्षिण ।
ओँ वैष्णवी विचेत् स्वाहा पश्चिम ।
ओँ इन्द्राणी विचेत् स्वाहा ऐशान्य ।
ओँ गणेन्द्री विचेत् स्वाहा वायव्य ।

नेपाल के एक पूजा चित्र में[1] जिसका परिणाम ६' से ७' है तथा जो ६ (प्रत्येक १०" ऊँची) चित्रपट्टियों में बँटा है, की सबसे बिचली चित्र पंक्ति में आठ महा श्मशानों का वर्णन उनकी देवियाँ, भैरवी तथा सिद्धों के चित्र और उनके नीचे नाम अंकित हैं। इनमें तीसरे श्मशान ज्वालाकुल की देवी इन्द्रायणी है।

| | | | |
|---|---|---|---|
| १- चण्डोग्र- श्मशान | असितांग भैरव | ब्रह्मायणी | कच्छपाद |
| २- गह्वर-श्मशान | क्रोध ,, | कौमारी | शवरपाद |
| ३- ज्वालाकुल- ,, | रुरु | इन्द्रायणी | विरूपाक्षपाद |
| ४- कलंक श्मशान | कपाल ,, | वाराही | कुक्कलासपाद |
| ५- घोरान्धक-श्मशान | उन्मत्त भैरव | वैष्णवी | चर्पतिपाद |
| ६- लक्ष्मीवर्ण-श्मशान | संहार भैरव | चामुण्डा | वरुणनाग |
| ७- किलाकिल-श्मशान | शुक्र-भैरव | महेश्वरी | नागरिपाद |
| ८- अट्टाट्टहास-श्मशान | भीषणा-भैरव | महालक्ष्मी | कुक्कुरिपाद |

ब्रह्मायणी इन्द्रायणी आदि सप्तमातृकाएँ हैं। जिनमें आठवीं महालक्ष्मी जोड़ दी गई है। अन्धकासुर वध की कथा में शिव जैसे ही अन्धकासुर का वध करते थे,

---

१- पॉट्, पी०एच० : योग एण्ड तन्त्र, पृष्ठ ८२-८४ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भूमि पर गिरी रक्त की बूंदों से अन्धकासुर का दूसरा रूप जन्म जाता है। तब शिव ने त्रिशूल से, विष्णु ने चक्र से अन्धकासुर को मारना चाहा। गिरते हुए रक्त को पीने के लिए मुख से निकली अग्नि से योगेश्वरी शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ। इसी प्रकार इसी उद्देश्य के लिए इन्द्रादि देवताओं ने भी अपनी अपनी शक्तियाँ- ब्रह्माणी, महेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा उत्पन्न की।

कापालिक सम्प्रदाय में इन्द्र का सम्बन्ध उन्मत्त से, और वराहपुराण में इन्द्राणी का सम्बन्ध मात्सर्य से दिया है। इण्डोनेशिया के इस इन्द्राणीस्तव में इन्द्राणी के लिए प्रयुक्त एक ओर महालक्ष्मी, ब्राह्मी, दुर्गा, विष्णुमाया तथा दूसरी ओर कालरात्रि, घोररूपा जैसे रौद्र विशेषण दिए हैं। यद्यपि इन विशेषणों का सम्बन्ध सप्त भैरवों अथवा सप्तमातृकाओं से नहीं जोड़ा जा सकता पर उनसे समानता उल्लेखनीय है। सप्तमातृकाओं के नाम विविध ग्रन्थों में भिन्न-भिन्न हैं। महानिर्वाणतन्त्र में सप्तमातृकाओं में इन्द्राणी नहीं है। किन्तु प्रपंचसारतन्त्र और तन्त्रराजतन्त्र में इन्द्राणी है।[१]

इन्द्राणीस्तव/भुवनेश्वरीस्तव

द्वीपान्तर में इन्द्राणी पर पूरा का पूरा स्तव उपलब्ध। इन्द्राणी के ५०० बार नाम स्मरण करने से श्रद्धालु भक्त वांछित फल पाता है और ५० बार नाम लेने से वह व्याधि बन्धनों से मुक्त हो जाता है। इस स्तव की संस्कृत बहुत शुद्ध नहीं है। यह स्तव जीवन में वृद्धि हेतु एवं पितरों के मंगल के लिए भी प्रयोग किया जाता है।

यही कारण है कि द्वीपान्तर वासी ने इसे उत्तम स्तव की कोटि में रखते हैं। सप्त श्लोकीय स्तुति इसप्रकार है-

---

१- पॉट्ट, पी०एच० : योग एण्ड तन्त्र, पृ० ६६ पर पादटिप्पण संख्या २०।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ॐ इन्द्राणी देवता लक्ष्मी विजया भुवनेश्वरी ।
शक्तिः सकलकामदा जयाद्विज्ञानादेव च ।। १ ।।
इन्द्रादिणी सहदेवी देवतासमुदाहृता ।
गौरी सह हरिदेवी दुर्गानामेति विश्रुता ।।२।।
सहस्राक्षासहायीस्त्री ब्रह्माणी ब्रह्मण्डिनी ।
नारायणी भद्रकाली रुद्राणी कृष्णापिंगला ।।३।।
अग्निज्वाला रुद्रमुखी कालरात्री तपस्विनी ।
मेघश्यामा सहस्राक्षी विष्णुमाया महोदरी ।।४।।
जटाधारी मुक्तकेशी घोररूपा महाबला ।
शुचिस्मिता विधिविधा महालक्ष्मी सरस्वती ।।५।।
अनन्तविजया प्राणा पृथुष्टूकापराजिता ।
तपनी पार्वती सीता चन्द्रकान्ता महोत्तमा ।।६।।
अर्धनामशतेन हि मुच्यते व्याधिबन्धनात् ।
आथार्धेन सहस्रेण लभते वांछितं फलम् ।। ७ ।।

इसमें इन्द्राणी की तुलना गौरी, ब्रह्मा की पत्नी, नारायणी, रुद्राणी से की गयी है तथा इन्द्राणी ही सहस्राक्षी है, कालरात्रि है, विष्णु माया है, सरस्वती है और वही पार्वती, सीता है। यद्यपि इस स्तुति में प्रयुक्त इन्द्राणी के लिए यह विशेषण उसका स्वरूप हमारे सामने स्पष्ट एवं विशद रूप से नहीं रख पाते किन्तु फिर भी इन्द्राणी का नाम जपने वाला साधक उसकी उपमा जानी मानी देवियों से करते हुए उसे ऊँचा स्थान दे देता है। कुछ हस्तलेखों में इस स्तव के लिए देवीस्तव और भुवनेश्वरीस्तव[१] शीर्षक प्रयुक्त हुए हैं।

---

१- लेवी, सिल्वां : संस्कृत टेक्स्ट्स फ्राम बालि, पृ० ३६ तथा द्रष्टव्य गॉड्रियन, टी० और होइकास, सी० : स्तुति एण्ड स्तव, पृ० २२१ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## नवशक्ति न्यास में इन्द्राणी

कमल दलमूल में नवशक्ति न्यास करते हुए पडण्डा निम्नलिखित मन्त्र का प्रयोग करता है। इसमें यद्यपि इन्द्राणी का नाम नहीं आया है किन्तु दीप्ताशक्ति जिसका पूर्व दिशा में न्यास किया जाता है, तथा जो दाहिने नेत्रमें स्थित है जिसका बीजाक्षर ऍं है-- देवता इन्द्र है। उसकी मुद्रा हृदय मुद्रा[१] कही गयी है।

| | | | |
|---|---|---|---|
| ओं ऍं दीप्तायै नमः | , पूर्व नेत्र त्ड्ंन् | इन्द्र | हृदय मुद्रा |
| ओं रीं सूक्ष्मायै नमः | , आग्नेय नेत्र किव | अग्नि | अस्त्र मुद्रा |
| ओं हूं जयायै नमः | , दक्षिण तुतुक् | यम | वृषभ मुद्रा |
| ओं हूं भद्रायै नमः | , नैऋत्य हृदय पुण्डरीक | सूर्य | शिखा मुद्रा |
| ओं ऍं विभूत्यै नमः | , पश्चिम इरु तॅङ्ंन् | वरुण | त्रिशूल मुद्रा |
| ओं ऍं विमलायै नमः | , वायव्य इरु किव | वायु | कवच मुद्रा |
| ओं रीं अमोघायै नमः | , उत्तर कर्ण त्ड्ंन् | कुबेर | धनु मुद्रा |
| ओं रीं विद्युतायै नमः | , ऐशान्य कर्ण किव | सोम | परशु मुद्रा |
| ओं ऍं सर्वतोमुखिन्यै नमः | , निंमगोपस्थ रि गुह्यं | स्मर | प्रतिष्ठा मुद्रा |

## अन्य देवस्तवों में शची:--

द्वीपान्तर में अन्य देवी-देवताओं के स्तवों में इन्द्राणी अथवा शची की भी स्तुति की गयी है। उदाहरण के रूप में महादेवस्तव[२] में महादेवजी की स्तुति के साथ-साथ शची देवी की भी वन्दना की गयी है।

---

१- सूर्य सेवन, पृष्ठ ७२।

२- स्तुति एण्ड स्तव, स्तोत्र संख्या ५२२'१, पृष्ठ ३२१।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## पृथ्वी शरीर देवी इन्द्राणी का विशेषण-

पृथ्वीस्तव में पृथ्वी देवी को अनेक देवियों के नामों से सम्बोधित किया गया है, जो उनकी शक्ति को प्रदर्शित करती हैं। इनमें पृथ्वी का एक विशेषण इन्द्राणी भी है।

"ओं पृथिवीशरीरं देवी, चतुर्देवमहादेवी।
चतुराश्रमे भटारी, शिवभूमि-महासिद्धि ।।
रिङ्० पूर्व निङ्० वसुन्धरी, शिवपत्नी पुत्रयोनि।
उमा दुर्गा गंगादेवी, ब्राह्मी भटारी वैष्णवी ।।
महेश्वरी सँकुमारी, गायत्री भैरवी गौरी।
हर्ष-सिद्धि महावरी, इन्द्राणी चामुण्डी देवी [1]।।

State Museum Library Lucknow 7228

## नवदेवतास्तव में

नवदेवतास्तव में अग्नि, ईश्वरदेव, उमा देवी, गायत्री, नैऋत्य, ब्रह्मा, महेश्वर, रुद्र, विष्णु, शान्तनी देवी, सरस्वती तथा सावित्री आदि देवी-देवताओं के साथ-साथ शची देवी [2] की भी स्तुति है।

"पूर्वे तु ईश्वरदेव, आग्नेय्यां तु महेश्वरः।
दक्षिणे भगवान् ब्रह्मा, नैऋत्यां रुद्र एव च ।।१
पश्चिमे तु महादेवो, वायव्ये शंकरस्तथा।
उत्तरे विष्णुदेवता, ऐशान्यां शम्भुरुच्यते ।।२
मध्ये पद्म शिवदेव, अदः सदाशिवस्तथा।
उर्ध्वे परम-शिवश्च, सर्वदेवता उच्यते ।।३
ईश्वर-उमादेवी च महेश्वरो लक्ष्मीदेवी।
ब्रह्मा सरस्वती देवी, रुद्रः शान्तनीदेवी च ।।४

---

१- स्तुति एण्ड स्तव, स्तोत्र सं० ६१७, पृ० ४१६।

२- वही, स्तोत्र सं० ७०६, पृ० ४२३।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महादेव: शचीदेवी, शंकरी महादेवी च ।
विष्णुर्भटारि श्रीदेवी, शम्भुदेव उमादेवी ।। ५
मध्ये सावित्री गायत्री, उमातत्त्वा महादेवी ।
ओं एं उं एं उं एं उं ओं, श्रीदेवीय नम: स्वाहा ।। ६
ईश्वर पूर्व वज्रं तु, धूपाग्नेय महेश्वर:
दण्ड ब्रह्मा दक्षिणे च, नैऋत्यां रुद्र मोक्षालम् ।। ७
ओं पश्चिमे महादेव, वायव्यामंकुशशंकराम् ।
गदा विष्णुरुत्तरेश, ऐशान्यं शम्भु त्रिशूल ।। ८
पद्म मध्य सदाशिव, अध: शिवश्च चक्रश्च ।
परम-शिव उर्ध्वश्च, गुरुस्त्रिशूलधारण: ।। ९

## इन्द्र

### इन्द्रस्तव

द्वीपान्तर में चतुर्-पमुक्त्यन् (catur - Pamuktyan) नामक एक स्तव प्राप्त होता है, जिसका दूसरा नाम इन्द्र-स्तव है। इस स्तव में देवराज इन्द्र की स्तुति[१] की गयी है। यथा-

देवदेव महासिद्धम् याज्ञिकानाम् फलमिदम् ।
लक्ष्मी: सिद्धिश्च दीर्घायु निर्विघ्नम् तु सुखाकृति ।।
अद्य मे सफलम् मुक्तं, अद्य मे सफलम् तप: ।
अद्य मे सफलम् ज्ञानम्, तत: पुण्यम् सुरेश्वर ।।
पूजितम् परमम् दिव्याम्, धूप दीप निवेद्यम् च ।
सर्वफलम् पायसान्नम्, कुड्मलम् ताम्बूलमपि ।।
भोजयेद् देवातिदेव:, सेश्वरी च वर-प्रद: ।
प्रयोजनम् न संशयत्, मरणोकल्प-मतिभि: ।।

---

१- स्तुति एण्ड स्तव, स्तोत्र सं० १६६, पृ० १२१ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अर्थात् हे देवदेव ! लक्ष्मी, सिद्धि, दीर्घायु और विघ्नरहित सुखलोक की प्राप्ति ही याज्ञिकों का महासिद्ध फल है। हे सुरेश्वर ! आज मेरे भोग सफल हैं, आज मेरी तपश्चर्या सफल है, और आज मेरा ज्ञान सफल हुआ। तदनन्तर पुण्य ही पुण्य है। धूप और दीप का निवेदन करना परम दिव्य पूजन है। क्षीर, मुद्ग और ताम्बूल का अर्पण सभी फलों को देने वाला है। जगदम्बिका भवानी के साथ-साथ वरदायी देवादिदेव को भी भोजन कराना चाहिए। मानवों को प्रयोजन के प्रति संशयालु नहीं होना चाहिए।

एक अन्य स्तव भी इन्द्रस्तव के नाम से मिलता है, किन्तु वह वास्तव में इन्द्र से सम्बन्धित नहीं है[१]।

सर्वपाप विनाशन

अन्य देवी-देवताओं की स्तुतियों में उसे महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। 'आकाशस्तव' में उसे देवों के संहार करने वाला, सभी रोगों को दूर करने वाला, सभी प्रकार के क्लेश को हरने वाला एवं सभी पापों को नष्ट करने वाला कहा गया है।

'ओं इन्द्रणां देवसंहारं, सर्वरोग- विमर्दनम् ।
सर्वक्लेश शुद्ध-नित्यं, सर्वपाप - विनाशनम् ।।'[२]

जगल्लोचन इन्द्र-

ध्रुवकम्पिस्तव में इन्द्र को श्रेष्ठ देव के रूप में दर्शाते हुए उसे जगल्लोचन कहा गया है।

---

१- स्तुति एण्ड स्तव, स्तोत्र सं० ३५४, पृ० २२३ ।

२- वही, स्तोत्र सं० ०४० '१०, पृ० ४० ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'ओं सूर्यबिंबं ध्रुवं देवं, सूर्य-सकल-शरीरम् ।
ब्रह्म- पर्वत- भास्वरं, लोचनं जगद् इन्द्रणम् ।।'[1]

इन्द्र के पुत्र पाण्डव

द्वीपान्तर में अर्जुनादि पाण्डवों को इन्द्र का पुत्र माना गया है[2]। जावी वायाङ् में इन्द्र और अर्जुनादि पाण्डवों श्याम मुख में दिखाया गया है।

लंका युद्ध में इन्द्र द्वारा अमृतवर्षा-

कवि भाषा में लिखा रामायण ककविन् ग्रन्थ दक्षिण पूर्व एशिया के रामायण साहित्य में सब प्रकार से अद्वितीय है। यह ११वीं शती के अन्त में कवि योगेश्वर द्वारा संस्कृत छन्दों में (२६ सर्गों में २७७४ श्लोकों में) लिखा गया है। रामायण ककविन् के २६वें सर्ग के श्लोक में लंकायुद्ध में रावण की सेनाओं के साथ-साथ बन्दरों की सेना भी मारी गयी जो देवताओं को असह्य था। उस समय इन्द्र ने प्रकृति सुशोभना सुन्दर लंका को पूर्ववत् बनाने के साथ-साथ अपने अमृतवर्षा से बन्दरों को भी पुन: जीवित कर दिया।

'बिह-बिह हति सं ह्यं इन्द्र हर्ष ।
ब्रत निर दान हुदन् मगों मवाःव ।
स-महल, कहिलि, हिलङ् य दुङ्गा
कल्कॅस् इर्क शुचि रोम भूमि राम्य ।।
तद्पु: नि परमामृते सपिनसुक् रिं राज्य लंका पुर ।
मंकिन् बुद्धि ह्युन्य, उज्वल भव: सल्विरन्य दे संकल ।
सम्पूर्णी [illegible] रिं महेन्द्र कल्कान् [illegible] य राम्यापुलि: ।
सर्वेर्क्वे: निकनं नना य हिननॉ दे सं ह्यं इन्द्रामॅल्स् ।।'[3]

---

१- स्तुति एण्ड स्तव, स्तो० सं० ८५७.१, पृ० ५११ ।
२- वही, स्तो० सं० ७८१.६, पृ० ४७१ ।
३- रामायण ककविन् , सर्ग २६, श्लोक ६१-६२ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(अनुवाद- देवता इन्द्र बहुत अधिक हर्षित हुआ और उसने अपने व्रत के रूप में वर्षा-दान किया। इस घनघोर वर्षा से जो कुछ भी टूट-फूट गया था और वह सब जो नष्ट हो गया था अपने पूर्व रूप में लौट आया। परिणामस्वरूप सारी भूमि शुचि (पवित्र) शोभनीय और रम्य हो गयी।

लंकापुर के राज्य में इन्द्र द्वारा किये गये इस परमामृत की वर्षा के द्वारा राज्य की शोभा (कल्याण) में अत्यधिक वृद्धि हुई और भाई रावण के द्वारा जो सब कुछ अपवित्र और कलंकित हो गया था, वह उज्ज्वल हो गया। महेन्द्र का सम्पूर्ण गिरि पुनश्च अपने सौंदर्य को प्राप्त हुआ। इस प्रकार से राम-रावण के बीच हुए युद्ध से जो कुछ भी हानि हुई थी, उसकी पूर्ति देववर इन्द्र के द्वारा कर दी गयी।)

## इन्द्र और अन्य देवता

### देवराज इन्द्र और कामदेव

द्वीपान्तर में कामदेव, दुर्गा, वरुण, शिव एवं स्मर आदि देवी-देवताओं को इन्द्र से सम्बद्ध बताया गया है। स्मरस्तव[१] में कामदेव को देवराज इन्द्र पर विजय प्राप्त करने वाला कहा गया है। यथा--

" इन्द्र-राजा च जयस्त्वं, सर्व-देव-वरस्त्वञ्च।
सर्व-देव-देवी-तत्त्वं, त्रैलोक्य- सेवितस्तथा॥"

इसी स्तव में कामदेव को इन्द्र के चिन्तामणि का रूप बताया गया है--

" चिन्तामणि-महेन्द्रश्च, सर्व-कुमार-राजा त्वम्।
कुमार-राजा संजाश्च, सर्व-देवी सेवितस्त्वम्॥"[२]

---

१- स्तुति एण्ड स्तव, स्तोत्र सं० ४०५'७, पृ० २५८।

२- वही, स्तोत्र सं० ४०५'८, पृ० २५८।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन्द्र द्वारा दुर्गास्तुति

दुर्गास्तव[१] में शक्रादि देवताओं के द्वारा भद्रकाली की प्रशंसा करने का उल्लेख है ।

" भद्रीं रौद्रीं असह्यां, नर-पिशित-मुखीं, त्वामपूर्वामुदीक्ष्य ।
भीता भ्रान्तश्च च सद्यस्, तरलतर-दृशो, मातरस्त्वां नमन्ति।
शक्राद्या: संस्तुवन्तु, फट् इति नम: सुरा:, श्यामलांगि-
मलङ्घ्याम् ।
त्वमेव प्रेत-नाशे, प्रणमति सततं, भद्रकालि प्रवेपन् ।।"

हे भद्रकाली ! कल्याणकारिणी, रौद्ररूपिणी, नरमाल्ययुक्त मुखवाली अपूर्वस्वरूपिणी आपका दर्शन करते ही भयाकुल एवं एवं भ्रान्त होने से चकित-भ्रमित नेत्रोंवाली अन्य मातायें (देवियाँ) आपको नमन करती हैं । इन्द्रादि देवगण 'फट् नम:' का उच्चारण करके स्तुति करते हुए, श्यामलांगी एवम् अन्यों द्वारा दुर्लंघ्य आपको ही प्रेतों का नाश करने (या प्रेत रूपी बाधायें दूर करने) के लिये काँपते हुए अनवरत प्रणमन करते हैं ।

जलनिधि वरुण को इन्द्र की उपाधि

आप:स्तव[२] में वरुण की अष्ट श्लोकों में स्तुति है । वरुण गंगा पुरुष हैं । वे समुद्र के देवता हैं और इन्द्रात्मक हैं । जलनिधि महावीर्य वरुण की तुलना ब्रह्मा विष्णु और महेश से की गई है । साथ ही साथ जलनिधि तथा वीर्यमूर्ति होने, एवं पर्वत के चारों ओर होने के कारण उन्हें साक्षात् इन्द्र ही कहा गया है ।

१- स्तुति एण्ड स्तव, स्तो० सं० ३२४ १७, पृ० २०० ।

२- वही, स्तो० सं० २८६ ३,५, पृ० १७६ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



'जलनिधि मूर्ति-देवं, भूमि-मत्स्य-महारौद्रम् ।
मुणदेव महालिंगं, लेम्बुहरो इन्द्रात्मकम् ।।
इन्द्र पर्वत-मण्डलं, जलनिधि मूर्तिवीर्यम् ।
रुद्र अग्नि ज्वलितेजो, सर्व-विघ्न-विनाशनम् ।।'

## इन्द्र का शिव से तादात्म्य

द्वीपान्तर से उपलब्ध शिवस्तव[१] में शिव को ही काल, यम, मृत्यु, वरुण, कुबेर, इन्द्र, विष्णु, रुद्र तथा पुरुष और प्रकृति कहा गया है ।

'त्वं कालस्त्वं यमो मृत्युर्वरुणस्त्वं कुबेरकः ।
इन्द्रः सूर्यः शशांकश्च ग्रह-नक्षत्र-तारकः ।।'

इसीप्रकार शिवसमूह नामक शिवस्तव[२] में भी शिव, ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, इन्द्र और वरुण के रूप में ।

'शिवो ब्रह्मा शिवो विष्णुर्महादेवः शिवस्तथा ।
शिव इन्द्रो वरुणश्च मां रक्षातु नमोऽस्तुते ।।'

## इन्द्र द्वादशादित्यों में से एक-

वरुणस्तव[३] में द्वादशादित्यों का उल्लेख आया है । ये द्वादशादित्य धातर्, अर्यमन्, मित्र, वरुण, अंशु, भग, इन्द्र, विवस्वान्, पूषन्, पर्जन्य, त्वष्टा और हरि हैं । इसप्रकार स्पष्ट होता है कि इन्द्र भी द्वादशादित्यों में से एक है । यथा--

१- स्तुति एण्ड स्तव, स्तोत्र सं० ४७१ ३, पृ० २६१ ।
२- वही, स्तोत्र सं० ७५१ ४, पृ० ४५० ।
३- वही, स्तोत्र सं० २२६ १, पृ० १३८ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"धाता अर्यमा मित्रश्च, वरुणोऽंशुर्भगस्तथा ।
इन्द्रो विवस्वा पूषा च, पर्जन्यस्त्वष्टा च हरि:।।"

## सप्तदेवों में एक इन्द्र-

सप्तपदमन्त्र में पितृपूजा में अन्य देवताओं- रवि,सोम, अग्नि, विष्णु, ब्रह्मा एवं ईश्वर के साथ इन्द्र का भी उल्लेख मिलता है। यहीं पर इन्द्र के स्वर्ग इन्द्रलोक[1] का भी उल्लेख है।

"रवि-सोम-हुताशेन्द्रा:, केशवो ब्रह्मा एवच।
ईश्वरदेव: सर्वे ते, पदस्था: सप्त-भेदका: ।।"

## लोकपाल के रूप में इन्द्र पूजा

द्वीपान्तर में इन्द्र को लोकपाल के रूप में भी माना गया है। यह पूर्व दिशा का लोकपाल था। चतुर्वेद-स्तुति[2] से स्पष्ट है कि सरस्वती देवी की पूजा में जल छिड़कते समय निम्नलिखित मन्त्रों का उच्चारण किया जाता है -

"ओं न: अ: इन्द्र-देवताय नम: स्वाहा
ओं० म: अ: वरुण-देवताय नम: स्वाहा
ओं गि दि: कुबेर- देवताय नम: स्वाहा
ओं गि वं यम- देवताय नम: स्वाहा

इसप्रकार इसमें इन्द्रादि चारो लोकपालों की पूजा की गयी है।
शिवस्तव[3] में भी इन्द्रादि चार लोकपालों के नाम आये हैं।

"सरस्वती श्री ह स्वाहा, यम- इन्द्राय संधाय।
र- वैश्रवणा-संधाय, कुबेर-वरुण स्वाहा।"

---

१- स्तुति एण्ड स्तव, स्तो० सं० ७८४, पृ० ४३८।
२- वही, स्तो० सं० ८०३ ३, पृ० ४८३।
३- वही, स्तो० सं० ८२४ ३, पृ० ४०५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मन्त्र न पुण्य[1] के चतुर्थ रोचक श्लोक में यम, वरुण, कुबेर और इन्द्रादि चार लोकपालों अथवा लोकरक्षकों के रूप में उल्लेख है।

"यम वरुण कुबेर, इन्द्र- चतुर्लोकपाल।
शिव सदाशिवमुध्र्वम्, ओंकार बिन्दुनादनम्।।"

ब्रह्मकवचस्तव[2] में अनेक देवी-देवताओं की स्तुति है। यम, इन्द्र, वरुण और कुबेर दिक्पालों की स्तुति की गयी है। इसका महत्व इसी बात से आंका जा सकता है कि स्तव का दूसरा नाम 'लोकनाथ' है।

## ज्येष्ठ मासके देवता इन्द्र-

द्वादशादित्य स्तव में भारतवर्ष एवं बालि दोनों ही स्थानों पर द्वादशादित्य का उल्लेख मिलता है। इन्हें द्वादशमास के देव रूप में स्वीकार किया गया है। भारतीय बृहत्-स्तोत्र-रत्नाकर में इन्द्र को ज्येष्ठ मास के देवता के रूप स्वीकार किया गया है।-

"ज्येष्ठ-मासे तपेद् इन्द्र आषाढे तपते रवि:।
गभस्ति: श्रावणे मासि यमो भाद्रपदे तथा।।"[3]

इसीप्रकार बालि में भी ज्येष्ठ मास के देवता इन्द्र है-

"ज्येष्ठे मासे भवेद् इन्द्र आषाढे अर्यमा स्मृत:।
गभस्ति: श्रावणे मासे यमो भाद्रपदे तथा।।"[4]

## आदित्यवार के देवता इन्द्र

द्वीपान्तर से "सप्तदिनमन्त्र"[5] प्राप्त होता है जिसमें प्रत्येक वार के देवता का उल्लेख है। इसमें आदित्यवार के देवता ईश्वर और इन्द्र हैं।

१- स्तुति एण्ड स्तव, स्तो० सं० ६३५.४, पृ० ५८० ।
२- वही, स्तो० सं० १४५.१२, पृ० ६३ ।
३- वही, स्तो० सं० ६७६.५५, पृ० ४०८ ।
४- वही, स्तो० सं० ६७६.४, पृ० ४०७ ।
५- वही, स्तो० सं० ८३८.१, पृ० ४९९ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"ओं सप्तवारेति वर्णायम्, आदित्य ईश्वर इन्द्र ।
सोम वैश्रवण उमा, अंगार ब्रह्मा रुद्रय ।।"

## पंचवार में अंगारवार के देव-

पंचवारमन्त्र[1] में शक्र को अंगारवार (मंगलवार) का देवता माना गया है । यथा-

"ओं पंचवारे ते वर्णाकरण, आदित्य तु महादेव ।
सोम वैश्रवण तथा, अंगार तु पुनः शक्र ।।"
बुद्ध विष्णु तथैव च, ब्रह्मा बृहस्पति चैव ।
शुक्र वरुण एव च, शनैश्चर यमश्चैव ।।"

## पंचादि स्तुति के ईश्वर इन्द्र-

पंचादि-स्तुति[2] में आकाश में स्थित पांच पर्वतों के नाम हैं । ये पर्वत इन्द्र या महेन्द्र, गन्धमादन, पेंगत् (Pĕgat), कृष्यमुख और कैलाश हैं । इन्द्र पर्वत पूर्व में स्थित है और इसका ईश्वर इन्द्र है, गन्धमादन ब्रह्मा का पर्वत है । पेंगत् गिरि महादेव का है, कृष्यमुख पर्वत पर विष्णु मूर्तिमान् हैं तथा मध्य में कैलाश पर्वत स्थित है, जो शिव से सम्बद्ध है । इसप्रकार रुद्र, शंकर, इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु महादेव, ईश्वरादि अनुग्रही हैं ।

"पर्व इन्द्रादि ईश्वरं, गन्धमादन ब्रह्मादि ।
पेंगत् महादेवाद्रियम्, कृष्यमुख हरिमूर्ति ।।
मध्यादि कैलाश शिव, रुद्र शंकर इन्द्रनाम् ।
ब्रह्मा विष्णु महादेव, ईश्वरादिऽनुग्रहकम् ।।"

---

१- स्तुति एण्ड स्तव, स्तोत्र सं० ६२४ १,२, पृ० ३०७ ।
२- वही, स्तोत्र सं० ०४६ ३,४, पृ० ४५ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



श्रीविजय नृपति की उपमा इन्द्र से

मलय प्रायद्वीप में लिगोर नामक स्थान से प्राप्त प्रथित शिलालेख के दोनों ओर अभिलेख है। इसे विद्वानों ने ए और बी कहा है। बी के १० वें श्लोक में श्रीविजय नृपति ने ६९७ शक (७७५ ए०डी०) वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी को स्तूपों और चैत्यों का निर्माण करवाया यहाँ पर श्रीविजय नृपति के लिए विशेषण के रूप में देवेन्द्रामेन पद उल्लेखनीय है अर्थात् श्रीविजय का राजा अन्य राजाओं में उसी प्रकार श्रेष्ठ था जिस प्रकार इन्द्र सभी देवताओं में श्रेष्ठ है। चैत्यों के लिए भी शिलालेख लेखक ने सुन्दर उपमा दी है। जैसे--

'त्रैलोक्यैकाद्यचिन्तामणिवपुषा।'[१]

मध्य जावी कला में इन्द्र-

जावा में प्रमुख देवी-देवताओं के अतिरिक्त अन्य साधारण अथवा गौण देवताओं की मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं। आठ दिक्पालों अर्थात् छोटे देवतागण जो विभिन्न दिशाओं की रक्षा करते हैं, जैसे यम, वरुण, इन्द्र, अग्नि, नैऋत्य और कुबेर की मूर्तियाँ मिलती हैं। इनमें प्रथम तीन देवों के विशेष आयुध धातु कागदा, कण्ठपाश और वज्र हैं।[२]

लारा जोंग्ग्रांग मन्दिर के केन्द्रीय फलक में एक मानव आकृति चित्रित है, जो दो कमल-दण्डों के मध्य एक गद्दी पर भारतीय ढंग से बैठी है और वह बहुत सुन्दर ढंग से बहुमूल्य आभूषणों से सज्जित है। इसके अतिरिक्त २४ फलकों पर २४ आकृतियाँ विभिन्न मुद्राओं बैठी हैं और सभी अपनी कुछ भिन्न-भिन्न विशेषताओं के द्वारा पहचानी गयी। उनके शीर्ष पर बने प्रभामण्डल से ऐसा विदित होता है कि वे देवता हैं। सन्केन् (Sunken )

---

१- छाबरा, बी०सी०एच०: एक्सपैन्शन् ऑव् इण्डो-आर्यन् कल्चर, पृ० ३४।

२- मजूमदार, आर०सी० : सुवर्णद्वीप, भाग २, पृ० १०५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलक के दूसरी ओर प्रत्येक में दो या तीन व्यक्तियों के चित्र हैं जो मुख्य चित्र के अनुयायी हैं ।

मुख्य चित्रों की पहचान बहुत दिनों से संदिग्ध समस्या थी । किसी समय उनको बोधिसत्वों का चित्र समझा जाता था यद्यपि मन्दिर शैव है । मिस मार्टिन टोनेट ने इसकी पहचान करने में सफलता प्राप्त की । उनके अनुसार ये आकृतियाँ दिक्पालों की हैं जो विभिन्न दिशाओं के संरक्षक हैं । जैसे--इन्द्र,यम, वरुण और कुबेर । यद्यपि मिस टोनेट के सभी चित्रों के विस्तृत पहचान को स्वीकार नहीं किया जा सकता[१]।

जावा के तुलुङ्०न्अगुङ्०, सेलमङ्०लेङ्० (Tulung-Agung, Selamangleng ) गुफा के प्रवेश द्वार के बायीं दीवार के उकेरे हुए चित्र में इन्द्र अपने स्वर्ग में अप्सराओं को आदेश दे रहा है कि वे पृथ्वी पर जायें और अर्जुन से उनके स्वयंकृत पश्चाताप को इन्द्रकिला गिरि पर समाप्त करने को कहें यद्यपि यह हिन्दू कथा है किन्तु इसे बौद्ध प्रयोजनों के लिए प्रयोग किया गया है । हम देखते हैं कि वृक्षों के पीछे जावी ढंग के भवन बने हैं । अप्सराओं के पीछे दाढ़ी से युक्त आकृति है, जो देवताओं के संदेशवाहक नारद हो सकते हैं । बायीं ओर कुछ दूरी पर संगीतज्ञ हैं[२]।

जावी केडिरि, त्जण्डि, सुरवन (Kediri, Tjandi Surawana) के उकेरे हुए चित्र में अर्जुन-विवाह का दृश्य अंकित है । अर्जुन और अप्सरा इन्द्र के स्वर्ग के अप्सराओं को छोड़ देते हैं । यहाँ की आकृतियाँ जावी छाया नाटक की पुत्तलिकाओं के सदृश्य व्यवहृत हैं[३]।

---

१- सुवर्णद्वीप,भाग २, पृ० २२१ ।
२- फ्रेडरिक , लूइस : द टेम्पल्स् एण्ड स्कल्प्चर ऑव् साउथ-ईस्ट एशिया,पृ०१९८।
३- वही, पृ० २०२ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



जावी वायाङ्० में इन्द्र

वायाङ्० में मुखवर्ण का विशेष स्थान है। यह उनका चरित्रांकन करने में सहायक है। कई पात्रों के तो अनेक रंग होतेथ हैं जो विभिन्न कालोत्थित विशेष-विशेष भावों की प्रबलता के परिचायक हैं। जावी वायाङ्० में अनेक पात्रों को काले मुख में दिखाया गया है। जिनमें कुछ प्रमुख पात्र इन्द्र, अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव, युधिष्ठिर एवं कर्ण आदि हैं। काला मुख उन आकृतियों की व्यक्तिगत विशेषताएँ हैं जो शान्त प्रकृति के हैं, जिनका अन्तर्वेग नियन्त्रित है और जो अधिक शारीरिक शक्ति वाले व्यक्तियों पर विजय प्राप्त करने के लिए आत्म-एकाग्रता में दक्ष हैं। किन्तु यह भी स्पष्ट है कि एक पात्र सदैव एक ही वर्ण में नहीं रहता है। वृकोदर एक आकर्षक उदाहरण है। वह लाल, सुनहरे या काले मुख में दृष्टिगोचर हो सकता है। तथापि यह भी स्पष्ट है कि अधिकांश समय में वह काले मुख में ही दिखाई पड़ता है। पुन: अपने बाहरी रूक्षता के होते हुए साधारण रूप से समझा जाता है कि वे अपने अन्तर्वेग को नियन्त्रित रखते हैं। काला मुख अन्याय के विरुद्ध संघर्ष के लिए भी स्थिर है।[१]

इन्द्रस्वर्ग

बालि में हम "इन्द्र स्वर्ग" सम्बन्धी कल्पना भी पाते हैं। स्वर्ग में इन्द्र के साथ वराप्सराएँ विद्याधर और विद्याधरियाँ, तथा ऋषि रहते हैं जो मनुष्य हैं और पवित्र जीवन व्यतीत करने के बाद इन्द्र के स्वर्ग में पहुँचे हैं। इन्द्र का निवास स्वर्ग या इन्द्रलोक कहलाता है और वैभवशाली निवासस्थानों का आदर्श है। यद्यपि यह स्वर्ग एवं इसके निवासी शत्रुओं के आक्रमण से सुरक्षित नहीं हैं। वहाँ के निवासी पुन: मनुष्य हो जाते हैं। अन्त में इसी कारण वे अपनी दैवीय शक्ति को सुरक्षित करने के लिए अमृत की इच्छा करते हैं। इन्द्र का स्वर्ग विष्णु (और ब्रह्मा) के स्वर्ग के नीचे है और इनके (विष्णु और ब्रह्मा के) स्वर्ग शिव के स्वर्ग से नीचे हैं। जब तक शिव के स्वर्ग में नहीं पहुँचता, आत्मा मोक्ष से

---

१- मलेम, आर० एल० : वायाङ्० पपेट्स, पृ० ६४-६५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



मुक्त रहता है। लेकिन बालि में विष्णु के स्वर्ग के सम्बन्ध में भी सुना जाता है। यद्यपि यह धार्मिक मत से अधिक परम्परा से जाना जाता है। प्रत्येक व्यक्ति शिव के स्वर्ग में पहुँचने का प्रयत्न करता है (जो बालि में कैलाश, मेरु या गुनुङ्, प्नुङ् के सबसे ऊँचे छोर पर होना चाहिए ) किन्तु केवल पडण्डा ही वहाँ शीघ्र प्रवेश करते दिखायी पड़ता है। अन्य लोग इन्द्र के स्वर्ग से सन्तुष्ट हो जाते हैं बालि के जीवनवृत्ति के बाद जहाँ वे सदैव रहने की आशा करते हैं, लेकिन चिन्तारहित और वैभव के साथ। शीघ्र स्वर्ग की प्राप्ति कुछ स्थिति में हो सकती है-- बेला या शत्तिय जो अपने पति का अग्नि में अनुसरण करती है तुरन्त स्वर्ग में जाती है। जो राजकुमार स्वयं और उसके अनुयायी अपने देश की रक्षा के लिए बलिदान हो जाता है, अपने अनुयायियों के साथ इन्द्र के स्वर्ग में जाता है। जहाँ कि, संभवत:, वे पुन: युद्ध में आते हैं। यदि शवदाह नियमानुसार होता है तो भी वे स्वर्ग के भागी होते हैं। लेकिन प्रवेश का यह अन्तिम साधन दूसरे दोनों के समान निश्चित नहीं दिखाई पड़ता। बालि के लोगों के अनुसार, बहुत से राजकुमार यद्यपि वे सभी मुख्य धार्मिक संस्कार के साथ जलाये गये, अभी तक पृथ्वी पर पशुओं में (सर्प, मेढक) के रूप में विचरण करते हैं।[१]

## इन्द्रगिरि

कम्बुज एवं चम्पा के समान इण्डोनेशिया में भी इन्द्र के नाम[२] के आधार पर कुछ भौगोलिक नाम रखे गये। द्वीपान्तर में इन्द्रगिरि नामक स्थान का उल्लेख मिलता है। जहाँ पहले हिन्दू धर्म माना जाता था, किन्तु १६वीं श० में उसे मुस्लिम धर्म में परिवर्तित कर दिया गया।

---

१- फ्रेडरिक, आर० : द सिविलाइजेशन एण्ड कल्चर ऑव् बालि, पृ० ४६।
२- सरकार, हिमांशु भूषण : सम् कॉन्ट्रिब्यूशन् ऑव् इण्डिया टू दि एन्शेण्ट् सिविलाइज़ेशन ऑव् इण्डोनेशिया एण्ड मलेशिया , पृ० ७० ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## सप्तम अध्याय

## जापान, चीन और तिब्बत में इन्द्

एशिया के हृदयांचलों में भारतभारती विलसती है । संस्कृत के पूजाघोष और मन्त्रों को सुनकर भारतीय श्रोता को सहज ही सम्पूर्ण एशिया में बन्धुत्व की भावना का साक्षात् होता है । भारत के देव और देवियाँ साधक कलाकारों की तूलिका की रूपमाधुरी से आप्लावित हो उठती हैं- यह दृश्य शिबिरदेश (साइबेरिया) के शीततम प्रदेशों से लेकर द्वीपान्तर(इण्डोनीसिया) की शस्यश्यामला उपत्यकाओं के भूभाग की आत्मा है ।

मोंगोल इतिहासानुसार छठी शतक के अन्तिम दशक में शाक्यवंश, नरेन्द्रयशस् और अन्य भारतीय आचार्य जनहिताय उनके देश में गए । तब से भारतीय आचार्यों का आगमन(१७वीं शतीतक) सतत चलता रहा और धर्म की ज्योति इस उत्तरावर्त में फैलती रही । फलत: मोंगोल भाषा में ६,००० संस्कृत ग्रन्थों का भाषान्तर हुआ जिनमें बौद्ध ग्रन्थों के साथ सारस्वत व्याकरण मेघदूत, और राजाभोज की कहानियाँ, वेतालपंचविंशति, अष्टांगहृदय जैसे संस्कृत साहित्य से ग्रन्थ भी सम्मिलित हैं । सन् १९४० में यहाँ ७५० विहार थे, अनेकों संस्कृत ताडपत्र थे, और कहा जाता है कि दस लाख मूर्तियाँ थीं । मन्दिर द्वारों पर गणेश की प्रतिमाएँ थीं । सोवियत संघ के प्रख्यात संस्कृतज्ञ श्चर्बात्स्की के अनुसार मोंगोल ७वीं ८वीं शती का भारत था ।

चीन में सर्वप्रथम पदार्पण करने वाले भारतीय आचार्य काश्यपमातंग और धर्मरक्ष थे । लोयाङ् में इनके लिए श्वेताश्वविहार (पेइ-मास्स) बना । चीन और मध्य एशिया की सीमा पर तुनह्वाङ् की पाँच सौ के लगभग गुफाएँ हैं । भारत,चीन के १६०० वर्ष यहाँ मूर्तिमन्त हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शिङ्गाई के चिन्-आन्-स्स विहार (५वीं शती का) में महाकाल की मूर्ति हाथी की कृति(खाल) को उठाए है । सूंड लटक रही है । यह कृत्तिवासस् का अद्वितीय निरूपण है । चतुर्मुख ब्रह्मा हंस पर आरूढ़ हैं । त्रिशूलधारी शिव नन्दी पर आसीन है । पेकिङ् के हृदय में महाकाल का प्राचीन मन्दिर है । भारत की आध्यात्मिक, बौद्धिक, कलात्मक ज्योति चीन में प्रदीप्त रही है ।

सिल्लावंशीय कोरिया सम्राटों ने ध्यानयोग से राष्ट्र में निर्भीकता, शौर्य, और धनु:कौशल को बढ़ाया (योग: कर्मसु कौशलम् )। स्थापत्यकला का पूर्ण विकास और वैभव मन्दिरों के निर्माण में हुआ । लोकगीतों में तथागत की प्रज्ञा और करुणा स्वरमाधुरी में लहलहा उठी । सूर्योदय की भूमि जापान में आचार्य कोबोदाइशी (७७४-८३५ ई०) ने काश्मीर निवासी आचार्य प्रज्ञ से नागरी लिपि सीखी । आचार्य ने कोयासान् के शान्त पर्वतांचल में संस्कृत सिद्धम् लिपि में अनेक बौद्ध संस्कृत मन्त्र लिखे । आज भी यह लिपि संस्कृत मन्त्र लिखने के लिए प्रचलित है । कोयासान् जापान के तान्त्रिक संप्रदाय शिंगोन (मन्त्रयान) का केन्द्र है । इस सम्प्रदाय के बारह सौ मन्दिरों में दैनन्दिनपूजा संस्कृत में सम्पन्न होती है । जापान की पुष्पसज्जा 'इकेबाना' विश्वविख्यात है । इसका प्रारम्भ बहुत रोचक है । भारतीय आचार्य जब ७वीं श० में जापान पहुँचे तब उन्होंने विश्वकरुणा से प्रेरित होकर झंझा से गिरे और धूप से झुलसे पौधों को मन्दिर में प्रश्रय दिया।जापान के शक्ति संमृद्ध समाज में यह नहीं सी करुणा जादू बन गई । मन्दिर में कांस्यपात्रों और काष्ठमंजूषाओं में उपवनिकाएँ लगाई गईं + जो देव प्रतिमा के पञ्चोपचार के रूप में समर्पित हुई यह पुष्पसाधना मन्दिर से जीवन में पहुँची । अस्तु मध्य एशिया तिब्बत चीन जापान और मंगोल देश में बौद्ध धर्म गया तथा उसके साथ-साथ शेष भारतीय संस्कृति एवं साहित्य से भी ये देश अपरिचित नहीं रहे । महायान का संस्कृत साहित्य आज भी इन देशों की भाषाओं में अपने पूर्ण वैभव के सुरक्षित है । बौद्ध धर्म में अनेक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh 

देवी देवता स्वीकार कर लिये गये । यद्यपि इनमें से कुछ का स्थान थोड़ा गौण भी हो गया है । परन्तु वहाँ भी गौणता के साथ-साथ जनता में प्रचलित इन देवों का महत्व था तभी तो बुद्ध और बोधिसत्व का उत्कर्ष दिखाने के लिए स्वर्ग में इन्द्र और ब्रह्मा जैसे देवों को अंजलिबद्ध दिखाया गया है । इस प्रसंग में Alicia Mastunage की नवीन पुस्तक "द बुद्धिस्ट फिलासफी ऑव् एसिमिलेशन" बहुत रोचक और सामग्री बहुल है । विशेष रूप से यह आदान तान्त्रिक बौद्ध धर्म की विशेषता है । इन्द्र लोकपाल के रूप में और देवराज के रूप में यहाँ सम्माननीय है । निष्पन्नयोगावली में धर्मधातु वागीश्वरमण्डल में अष्ट दिक्पाल इसप्रकार है- पूर्व में इन्द्र, दक्षिण-में पूर्व में अग्नि, दक्षिण में यम, दक्षिण पश्चिम में सूर्य, पश्चिम में वरुण, उत्तर-पश्चिम में पवन, उत्तर में कुबेर, उत्तर पूर्व में सोमचन्द्र(ईशान)। षड् दिशाओं की पूजा जापान और तिब्बत में लोकप्रिय रही है । पूर्व में अग्नि, दक्षिण में इन्द्र, पश्चिम में वरुण, उत्तर में सोम, ऊपर बृहस्पति और नीचे विष्णु हैं । बौद्ध जातकों एवं शाक्यमुनि बुद्ध की जीवनी में इन्द्र का स्थान सर्वविदित है ।

जापान में इन्द्र
------------

चीन और जापान की तान्त्रिक कला में इन्द्र बहुत लोकप्रिय रहे हैं । इन्द्र को इन तान्त्रिक स्वरूप ने कला में वज्रधरों के स्वरूप को बहुत प्रभावित किया ये वज्रधर, रौद्ररूप वाले धर्मरक्षक द्वारपाल हैं । जापान में तान्त्रिक धर्म से पूर्व का इन्द्र होर्युजी विहार के तमप्रुशि में- नो प्रुशि भवन में बायीं ओर चित्रित है । यह मन्दिर असुककाल (५५२-६४५) का है)। यहाँ इन्द्र कमल पर बोधिसत्त्व के रूप में चित्रित है । इस काल में ब्रह्मा (जापानी बोनटेन) के साथ इन्द्र का यह रूप (देखिए जापानी मण्डल में ब्रह्माणी के साथ इन्द्राणी) अनेक स्थानों, मन्दिरों, विहारों और ग्रन्थों में उपलब्ध है । जापानी कला में जहाँ कहीं भी इन्द्र और ब्रह्मा(तान्त्रिक धर्म से बाहर) चित्रित है वहाँ ये सब देवों का प्रतिनिधित्व करते हैं । इसका

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परिणाम यह हुआ है कि जहाँ कहीं भी किसी देव का चित्रण करना होता है वहाँ की रूपरेखा और उसके आयुध ले लिए जाते हैं। इस दृष्टि से देखा जाए तो जापान के बौद्ध धर्म ने इतिहास में इन्द्र का व्यापक प्रभाव है।[१] इन्द्र का जापानी नाम Taishaku है। इन्द्र का चीनी नाम Ti-Shih - t'ien है जिसका अर्थ 'शक्तिशाली' होता है। एक अन्य चीनी नाम 'देववाची' है।

कोबो दाइशी ने जापान ने शिंगोन् अर्थात् 'मन्त्रयान' की प्रतिष्ठा की। चीन के प्रसिद्ध ध्यानाचार्य हुइकुओ (Hui Kuo )से उन्होंने ८०७ ई० में दो मण्डलों महाकरुणा गर्भोद्भवमण्डल और वज्रधातुमण्डल में दीक्षा ली। ये दोनों मण्डल जापान में गेन्जु (Genzu = twin ) मण्डल के नाम से प्रसिद्ध हुए। शुभाकरसिंह, वज्रबोधि और अमोघवज्र चीन में मन्त्रयान के संस्थापक थे। अमोघवज्र के शिष्य हुइकुओ थे। चीन से जापान आने वाले ये दोनों मण्डल रंगीन थे किन्तु मूल प्रति अब उपलब्ध नहीं है। इसकी एक प्रति तकाओमण्डल के रूप में जिंगोजी ( Jingoji ) विहार में सुरक्षित है। यह गहरे जामनी रंग के कौशेय पर स्वर्ण और रजत रेखाओं में मूलप्रति की नकल है। इसकी संभावित तिथि ८२४ है। इस चित्र से फिर अनेक प्रतियाँ की गईं जिनमें तीन प्रसिद्ध हैं- पहली १०३५ ई० में काजानजी विहार में कोबोदाइशी के २०० वें निर्वाण दिवस पर की गयी प्रति, दूसरी कामाकुरा वंश के अंत में और तीसरी १८६६ में जो ओमुरा ( Omura ) संस्करण के नाम से प्रसिद्ध है।

---

१- मत्सुनागि, ए० : द बुद्धिस्ट् फिलासफी ऑव् एसिमिलेशन, पृ० २३-२५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस तीसरी प्रति[१] के अनुसार इन दो मण्डलों में शक्र अथवा इन्द्र निम्न प्रसंगों में चित्रित है— महाभूतमण्डल में (चित्र संख्या २.२६,-४४८), समय मण्डल में (चित्र सं० ५२५), समयमण्डल में देवताओं के आयुध कमलपत्र पर चित्रित हैं। इन्द्र का आयुध वज्र है ।

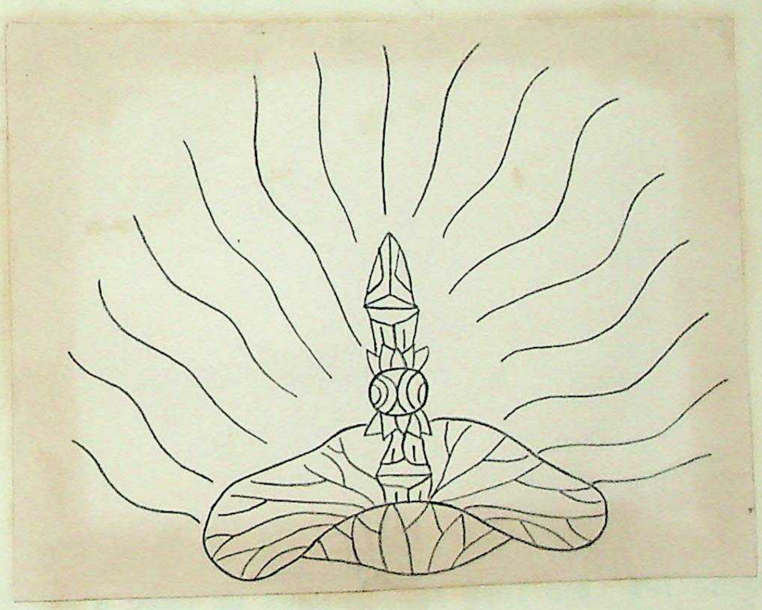

---

१- लोकेश चन्द्र : दि एसोटेरिक आइकोनोग्रैफी ऑव् जेपनीज़ मण्डलास्, शतपिटक माला ग्रन्थ संख्या ६२, नई दिल्ली, १९७१ में यह मण्डल अपने पूर्ण विस्तार के साथ प्रकाशित है। इस ग्रन्थ की भूमिका में पृ० ५५-११७ तक अन्य जापानी मण्डलों की देव सूचियाँ दी हुई हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सूक्ष्ममण्डल में शक्र कमलपत्र पर आसीन एवं वज्रधारी हैं। उनके सिर पर मुकुट के स्थान पर टोपी है। यहाँ वे २० देवों के समूह में ५वें[1] स्थान पर हैं (चित्र संख्या ५६८)। पूजा मण्डल में भी शक्र का यही रूप है किन्तु सिर पर जटाजूट सुशोभित है (चित्र संख्या ६७०)।

इन्द्र देवरूप में विजय कर्म मण्डल में (चित्र संख्या ७७३) तथा त्रैलोक्यविजयसमय-मण्डल (चित्र संख्या ८४६) चित्रित है।

इसी मण्डल में एक स्थान पर इन्द्र के साथ इन्द्राणी दी हुई है। ये इन्द्र के बायीं ओर घुटने टेक कर इन्द्र की ओर मुख किए हाथों में कमलपुष्प अर्पित करती हुई चित्रित की गई है। इन्द्र के आकार से इन्द्राणी का आकार एक तिहाई है (चित्र संख्या ३६७-३६८)। [redacted] है।

---

१- २० देवों का क्रम इसप्रकार है- वज्रछिन्न, कुमार, नारायण, पिंगल, शक्र ब्रह्मा आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसीप्रकार चित्रसंख्या ३०४-५ में ब्राह्मी और शक्राणी की जोड़ी विशेष उल्लेखनीय है।

चीनी बौद्ध त्रिपिटक के ताइशो संस्करण में बौद्ध मूर्ति कला विभाग में जापान में तान्त्रिक बौद्ध धर्म के मन्त्र ग्रन्थों और मण्डलों पर १२ भाग हैं। यहाँ विस्तार से जापानी मण्डलों का अध्ययन और चित्र दिये हैं। लगभग सभी मण्डलों में शक्र अथवा इन्द्र का स्थान है। उदाहरणार्थ प्रथम भाग में वर्णित २८वें मण्डल (महाकरुणागर्भमण्डल) में ३५१-५२ वाँ चित्र इन्द्र और इन्द्रपरिचर का है। ३७ वें मण्डल में (चतुर्विंशतिभ तथा उनके देव एवं परिवार मण्डल में) इन्द्र १०८वाँ चित्र है। ३८ वें मण्डल (वज्रधातु) में शक्र २० देवों में से एक है। इसी प्रकार वज्रधातुमण्डल (इसमें नौ मण्डल होते हैं) के महामण्डल में ८७ वाँ शक्र है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


चीन में इन्द्र

पेकिंग के राजप्रासाद में रंगीन, सुनहरे, चित्रित एवं कलात्मक हस्तलिखित बौद्ध सूत्रों का अपूर्व संग्रह है। यहाँ पर 'महारत्नसंचयसूत्र'[१] के हस्तलेख के ऊपर और नीचे लकड़ी के पट लगे हैं जिन पर इन्द्र, यम, ब्रह्मा आदि के सुन्दर ओजपूर्ण चित्र हैं।

तथागत बुद्ध की (मिङ्वंश के समय में लिखी गयी) चीनी जीवनी Shih-Chia-Ju-lai yung-hua shih-chi अर्थात् 'शाक्यतथागतनिर्माणकायचरितम्'[२] में एक ओर बुद्ध जीवनी लिखी हुई है और दूसरी ओर काष्ठफलकों पर खुदे हुए १०० रेखाचित्र हैं। पहले और दूसरे चित्र में तथागत वैरोचन बुद्ध अवतंसक सूत्र एवं शील का देवों को उपदेश दे रहे हैं, तीसरे में इन्द्रादि देव बोधिवृक्ष के नीचे बुद्ध को नमस्कार कर रहे हैं, चौथे में नागभवन में बुद्ध ध्यानावस्थित हैं, ५वें में सम्राट् को उपदेश दे रहे हैं। छठें में इन्द्र ब्रह्मा आदि चार देवराज बुद्ध को अपनी श्रद्धा और आदर समर्पित करते हुए दिखाए गये हैं। सहस्रबाहु अवलोकितेश्वर के अनुचरों में इन्द्र, महेश्वर, देवराज, गरुड़, ऋषिवसु, ब्रह्मा, देवराज, महाकाल, सरस्वती विनायकादि हैं। तुन्‌ह्वाङ् में इनका अद्भुत चित्रण हुआ है।[३]

तिब्बत में इन्द्र

देव, नाग, किन्नर, गन्धर्व, असुर, गरुड़ और महोरग इन आठ श्रेणियों में विभक्त अनेक हिन्दू देवी देवता तिब्बत के बौद्ध धर्म में

---

१- लोकेश चन्द्र और सुदर्शना सिंघल : आचार्य रघुवीर का चीन अभियान, पृ० २७, शतपिटक माला ग्रन्थ संख्या ७६, नई दिल्ली, १९६९।

२- लोकेशचन्द्र : बुद्ध इन चाइनीज़ वुडकट्स, पृ० ६, शतपिटकमाला ग्रन्थसंख्या ९८, नई दिल्ली, १९७२।

३- वैले : कैटलाग् आव् पेण्टिंग्स् रिकवर्ड फ्राम् तुन्-ह्वाङ् बाई सर आरल् स्टाइन, लन्दन, १९३१। चित्र के लिए देखिए सेर इण्डिया, चित्र संख्या LXIII।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh 

स्वीकृत हैं [१]। देव का अर्थ दिक्पाल हैं । पूर्व में इन्द्र का स्थान है। इसका सम्बन्ध बृहस्पति नक्षत्र से है। तिब्बत की बौद्ध चित्रावली [२] में (चित्रसंख्या ३८४-३८८ में) कालवत् देवसमूह में Dam-can Chos-rgyal मध्य में और उसके चारों ओर इन्द्र, उपेन्द्र (मोंगोल उबुन्द्र = ubundra ), सितवरुण और कुबेर हैं। Dan-Can का मोंगोल नाम Kalayavati [३] है। जहाँ काल = समय और वति का अर्थ 'वत्' है अर्थात् कालवत् देवता इन चार देवों से आवृत हैं।

---

१- वाडल, एल०ए० : लामाइज्म्, पृ० ३६७, द्वितीय संस्करण, लण्डन, १९५६।

२- रघुवीर और लोकेशचन्द्र : ए न्यू तिब्बतोमोंगोल पेन्थियन्, भाग ६, भूमिका ५-६ ; नई दिल्ली, १९६२।

३- द्रष्टव्य है- Nebesky Wojkowitz : Oraches and Demons of Tibet, p.3, A Grünwedel : Mythologie des Buddhism in Tibet and der Mongolen p. 184-187, F. Lessing : Yung-Ho-Kung, p. 87.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तिब्बत में इन्द्र, पृष्ठ १२२.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

## पुस्तक-सूची


अग्रवाल, वासुदेव शरण : भारतीय कला, पृथिवी प्रकाशन, वाराणसी, १९६६ ।

: प्राचीन भारतीय लोकधर्म, ज्ञानोदय ट्रस्ट, अहमदाबाद, १९६४ ।

उपाध्याय, बलदेव : वैदिक साहित्य और संस्कृति, तृतीय संस्करण, शारदा मन्दिर, वाराणसी, १९६७ ।

कवि योगेश्वर : रामायण ककविन्, (११वीं शती में लिखा द्वीपान्तर का ग्रन्थ )

―――――― [भुवनकोश (इण्डोनेसिया की प्राचीन भाषा कवि का शैव दर्शन पर उपलब्ध प्राचीनतम ग्रन्थ ।

कीथ, आर्थर बेरीडेल (अनुवादक सूर्यकान्त) : वैदिक धर्म एवं दर्शन, प्रथम भाग, मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी, १९६३ ।

गोस्वामी तुलसीदास : श्रीरामचरितमानस, सप्तम संस्करण, गीताप्रेस गोरखपुर, १९४३ ।

चतुर्वेदी, गिरिधरशर्मा : वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, द्वितीय संस्करण, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना, १९७२ ।

: पुराण-परिशीलन, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना।

चतुर्वेदी, सीताराम : कालिदास-ग्रन्थावली, तृतीय संस्करण, भारत प्रकाशन मंदिर, अलीगढ़, सं० २०१६ ।

चौबे, श्री शंभुनारायण : मानस अनुशीलन, प्रथम संस्करण, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी, १९६७।

जोशी, नीलकण्ठ पुरुषोत्तम : मथुरा की मूर्तिकला, पुरातत्त्व संग्रहालय, मथुरा, १९६५ ।

पाण्डेय, रामनारायणदत्त शास्त्री : (अनुवादक) : '[redacted]' महाभारत, द्वितीय संस्करण, गीताप्रेस गोरखपुर, १९६७ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुरी, बैजनाथ : सुदूरपूर्व में भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास, प्रथम संस्करण, हिंदी समिति, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, १९६२ ।

———— [मत्स्यपुराण, गीताप्रेस गोरखपुर ।

माघ : शिशुपालवध महाकाव्य, अनुवादक- त्रिपाठी रामप्रताप प्रथम संस्करण, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, १९५३।

———— [मारकण्डेय पुराण, (प्रथम खण्ड), प्रथम संस्करण, संस्कृति-संस्थान, बरेली, १९६७ ।

मुनिलाल (अनुवादक) : अध्यात्मरामायण, पंचदश संस्करण, गीताप्रेस गोरखपुर १९७० ।

राय, रामकुमार : (अनुवादक): शौनकीय बृहद्देवता, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, १९६३।

राय, सिद्धेश्वरी नारायण : पौराणिक धर्म एवं समाज, प्रथम संस्करण पंचनद पब्लिकेशंस, इलाहाबाद, १९६८।

शर्मा, जयदेव भाष्यकार : अथर्ववेद संहिता, आर्य्य साहित्य मण्डल लिमिटेड, अजमेर, १९४२।

शर्मा, मुंशीराम : वैदिक निबन्धावली, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, १९६३।

शास्त्री, सूर्यकान्त : संस्कृत वाङ्मय का विवेचनात्मक इतिहास, ओरियण्ट लॉगमैन लिमिटेड, नई दिल्ली, १९७२

शास्त्री, हरगोविन्द (टीकाकार): अमरकोष, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, १९६८

———— [शिवपुराण ।

श्यामसुंदरदास (मूल संपादक) : हिंदी शब्दसागर, नवाँ भाग, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी, १९७२।

शारदा रानी (सम्पादिका ): तुतिकासन ( इण्डोनेसिया के प्राचीन साहित्य का नीति ग्रन्थ), शतपिटक माला ग्रन्थ संख्या २०, नई दिल्ली, १९६१।

State Museum Library Lucknow

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh



सप्त भुवन (हस्तलेख), हालैण्ड के लाइडन् पुस्तकालय के संग्रह में इस हस्तलेख की संख्या Cod. Or 3948 (6) है।

———————— : श्रीमद्भागवतमहापुराण, पंचम संस्करण, गीताप्रेस गोरखपुर, १६६४।

———————— : श्री विष्णुपुराण, षाष्ठ संस्करण, गीताप्रेस गोरखपुर, १६६७

सिंघल, सुदर्शना देवी (सम्पादिका) : भुवनसंदोप, शीघ्र ही प्रकाशित हो जायगा।

—— : ~~भुवनसंदोष, शीघ्र ही प्रकाशित हो जायगा~~।

—— : भारत और एशिया के अन्य देश, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, १६७०।

———————— : हरिवंश पुराण, गीताप्रेस गोरखपुर।

Aung, Maung Htin. Folk Elements in Burmese Buddhism, Oxford University Press, London, 1962.

Banerjea, J.N. : The Development of Hindu Iconography, University of Calcutta, 1956.

Bernet Kempers, A.J. : Ancient Indonesian Art, Amsterdam, 1959.

Bharti (भारती) Bulletin of the College of Indology, B.H.U. No. 9, Pt.II, 1965-66.

Bose, P.: The Hindu Colony of Cambodia, Adyar, 1927.

Bose, A.C.: The Call of the Vedas, Bharatiya V-idya Bhavan, Bombay, 1970.

Chandra, Lokesh : Buddha in Chinese Woodcuts, Śatapitaka seri-es Vol. 98, New Delhi, 1973.

—— : The Esoteric Iconography of Japanese Mandalas, Śatapitaka Series Vol. 98, New Delhi, 1971.

Chandra, Lokesh and Singhal, S.D. : Prof. Raghuviri's Expedition to China, Śatapitaka series vol. 76, New Delhi, 1969.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


Chandra, Lokesh : 'Ganesh in Japan' in studies in Indo-Asian Art and Culture, Part I, New Delhi, 1972.

: 'Saraswati in Japanese Art' in studies in Indo-Asian Art and Culture, Part 2, New Delhi, 1973.

Chhabra, B.Ch.: Expansion of Indo-Aryan Culture, Munshi Ram Manohar Lal, Delhi, 1965.

Coedes, G.: The Indianized States of South-East Asia, (English translation of Les Etats Hindouises d'Indochine et d'Indonesia, 3rd ed. 1964 by Susan Broun couing) East West Centre Press, Honoluln, 1968.

Coomaraswamy, A.K. : History of Indian and Indonesian Art, Dover Publications, New York, 1965.

Frederic, Louis : The Temples and Sculpture of South East Asia (translated from French by Arnold Rosin), Thames And Hudson, London, 1965.

Friederich, R.: The Civilization And Culture of Bali, Edited by Ernst R. Rost Susil Gupta(India) Private Ltd. Calcutta, 1959.

Getty, A. : Ganeśa , IInd ed., Munshiram Manoharlal, New Delhi, 1971.

Ghosh, M.: A History of Cambodia, 2nd Ed., Calcutta, 1968.

Goudriaan, T.and Hooykaas, C.: Stuti and Stava(Bauddha Śaiva and Vaisnava of Balinese Brahnana Priests), Verhandelingen der Koninklijke Nederlandse Akademic van Nktenschappen, Afd. Letterkunde Nieuwe Reeks, Deel 76, North-Holland Publishing Company-Amsterdam, London, 1971.

Giteau, Madeleine : Khmer Sculpture and the Angkor Civilization, Thames and Hudson, London, 1965.

Gonda, J.: Sanskrit in Indonesia, International Academy of Indian culture, Nagpur(India), 1952.

Groslier, Bernard : Angkor Art and Civilization, (translated from the French by Ernshow Smith), Thames and Hudson, London, Revised ed., 1966.

Groslier, B.Ph.: Art of Indochina, Art of the world series, London, 1962.

Hall, D.G.E.: A History of South-East Asia, 2nd ed., New York, 1958.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

Chandra, Lokesh : 'Women in Japan' in studies in Indo-Asian Art and Culture, Part I, New Delhi, 1972.

: 'Ornament in Japanese Art' in studies in Indo-Asian Art and Culture, Part 2, New Delhi, 1973.

Chhabra, B.Ch.: Expansion of Indo-Aryan Culture, Munshi Ram Manohar Lal, Delhi, 1965.

Coedes, G.: The Indianized States of South-East Asia, (English translation of Les Etats Hindouises d'Indochine et d'Indonesie 3rd ed. 1964 by Susan Brown cowing) East West Center Press, Honolulu, 1968.

Coomaraswamy, A.K.: History of Indian and Indonesian Art, Dover Publications, New York, 1965.

Frederic, Louis : The Temples and Sculpture of South East Asia (translated from French by Arnold Rosin), Thames and Hudson, London, 1965.

Friederich, R.: The Civilization And Culture of Bali, Edited by Ernst R. Rost Susil Gupta(India) Private Ltd. Calcutta, 1959.

Getty, A.: Ganesa, IInd ed., Munshiram Manoharlal, New Delhi, 1971.

Ghosh, M.: A History of Cambodia, 2nd Ed., Calcutta, 1968.

Goudriaan, T. and Hooykaas, C.: Stuti and Stava (Bauddha, Saiva and Vaisnava of Balinese Brahman Priests), Verhandelingen der Koninklijke Nederlandse Akademie van Wetenschappen, Afd. Letterkunde Nieuwe Reeks, Deel 76, North-Holland Publishing Company-Amsterdam, London, 1971.

Giteau, Madeleine : Khmer Sculpture and the Angkor Civilization, Thames and Hudson, London, 1965.

Gonda, J.: Sanskrit in Indonesia, International Academy of Indian culture, Nagpur(India), 1952.

Groslier, Bernard : Angkor Art and Civilization, (translated from the French by Eric Ben Smith), Thames and Hudson, London, Revised ed., 1966.

Groslier, B.Ph.: Art of Indochina, Art of the world series, London, 1962.

Hall, D.G.E.: A History of South-East Asia, 3rd ed., New York, 1968.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh


Hooykaas, C.: Surya Sevana, (of Balinese Priests), Amsterdam, 1966.

Le May, R.: A Consise History of Buddhist Art in Siam, Cambridge, 1938.

(Majumdar, R.C. : Ancient Indian Colonies in the fareast, vol I. Champa, Lahore, 1927.

" : Ancient Indian Colonization in south East Asia, Maharaja Sayajirao Gaekwad Honorarium Lectueer, Baroda 1963(2nd edition).

" : Inscriptions of Kambuja, Aziatic Society Calcutta, 1953.

" : Suvarnadvipa ( Ancient Indian colonies in the Far East, Vols II, Calcutta, 1938.

Marshall, J. and Foucher, A.: The Monuments of Sānchī with the texts of inscriptions edited translated and annotated by Majumdar, N.G., Vols 3.

Matsunage, Alicia : The Buddhist Philosophy of Assimilation, New York, 1971.

Mellema, R.L. : Wayang Puppets, Koninklijk Institute Voor de Tropen, Amsterdam, 1954.

Pott, P.H. : Yoga and Yantra (translated from Dutch by Rodney Needham), The Hague, 1966.

Raghu Vira and Dr. Lokesh Chandre : A New Tibeto Mongol Pantheon , Vol.6, New Delhi, 1962.

Rowland, B.: The Art and Architecture of India Penguin Books, Melbourne, London, Baltinmore, 1953.

Ray, Nihar Ranjan : Brahmanical Gods in Burma, University of Calcutta, 1932.

Sarkar, H.B. : Indian Influences on the Literature of Java and Bali, Greater India Society, Calcutta, 1934.

: Some Contribution of India to the Ancient Civilisation of Indonisea and Malaysia, Punthi Pustak, Calcutta, 1970.

Seckel Dietrich : The Art of Buddhism, Art of the world series, London, 1964.

Singhal, S.D.(editor): Tattwajñāna and Mahājñāna(two Kawioj Philosophical texts), Śata-pitaka series Vol 23, Nes Delhi, 1962.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

6


Sylvain Levi : Sanskrit Texts from Bali
Gaekvad's Oriental Series, Vol, LXVII, Orienta Institute Baroda, 1933.

Waddell, L.A. : Buddhism of Tibet, Lamaism, Cambridge, reprint, 1959.

Waley : Calalogue of Paintings recovered from Tan-Huang by Sir, A. Stein, London 1931.

Wray, Elizaleth. Rosenfield, Clare and Bailey, Dorothy with photographs by wray, Joe D.,: Ten Lives of the Buddha, Siamese temple Painting and Jataka Tales, weatherhill, New York & Tokyo, 1972.

Zimmer, Heinrich : The Art of Indian Asia ed. by Joseph campbell, 2 Vols(Bollingon ~~Sadvai~~.Series, 39) 2nd ed. , New York, 1960.

Zimmer, Heinrich : Myths and Symbols in Indian Art and Civilization, Edited by, Joseph Campbell 3rd ~~penting~~ printing, New York, 1965.

Ziesenis : A.: Shiden Zur Geschichte Des Śivaismus, Die Śivitischen Systeme in Der Altjavanischen Literatur I, BKI, deel 98.


—.—

State Museum Lucknow

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

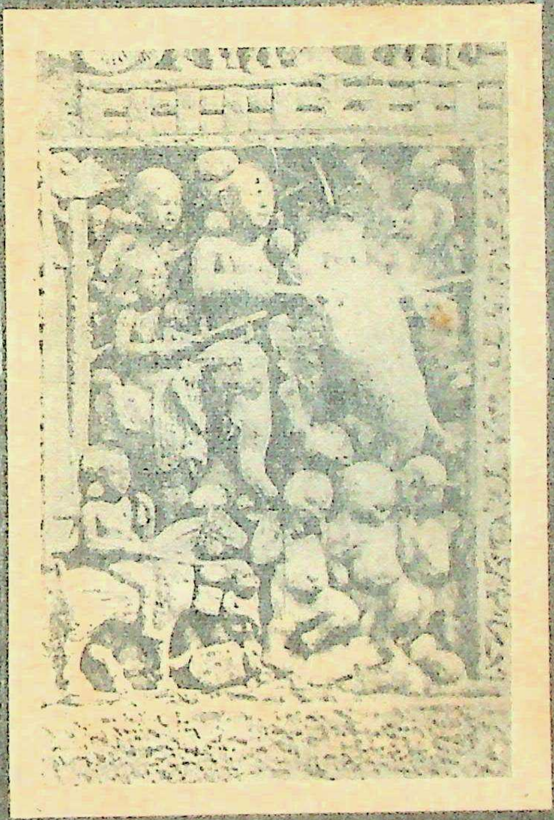

चित्रसंख्या १, पृष्ठ ४८

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

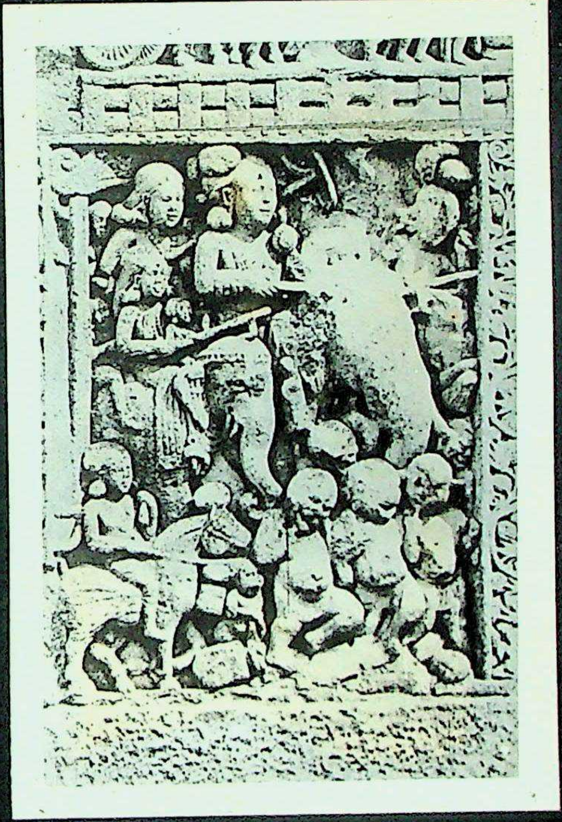

चित्रसंख्या 1, पृष्ठ ४८

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

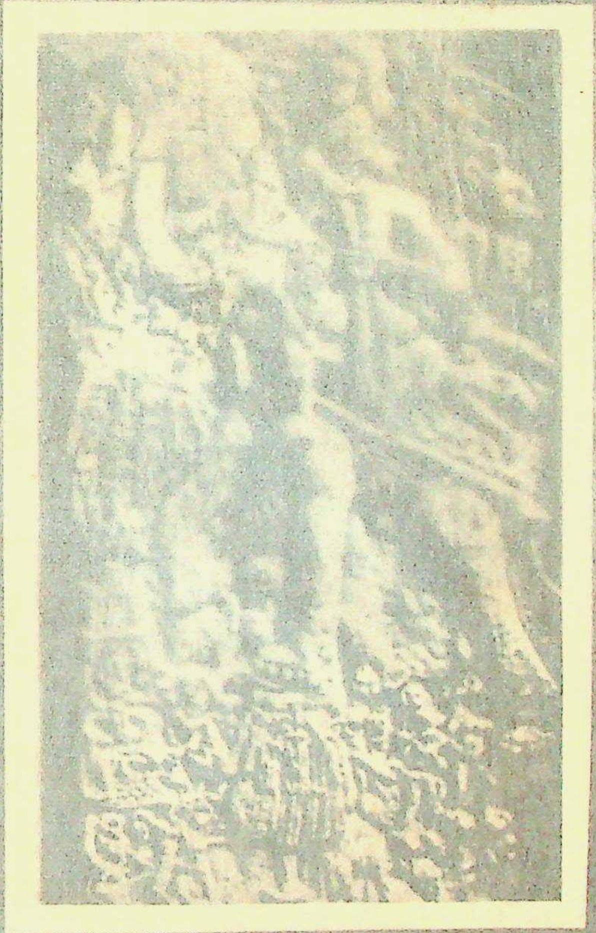

चित्रसंख्या २ पृष्ठ ७४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

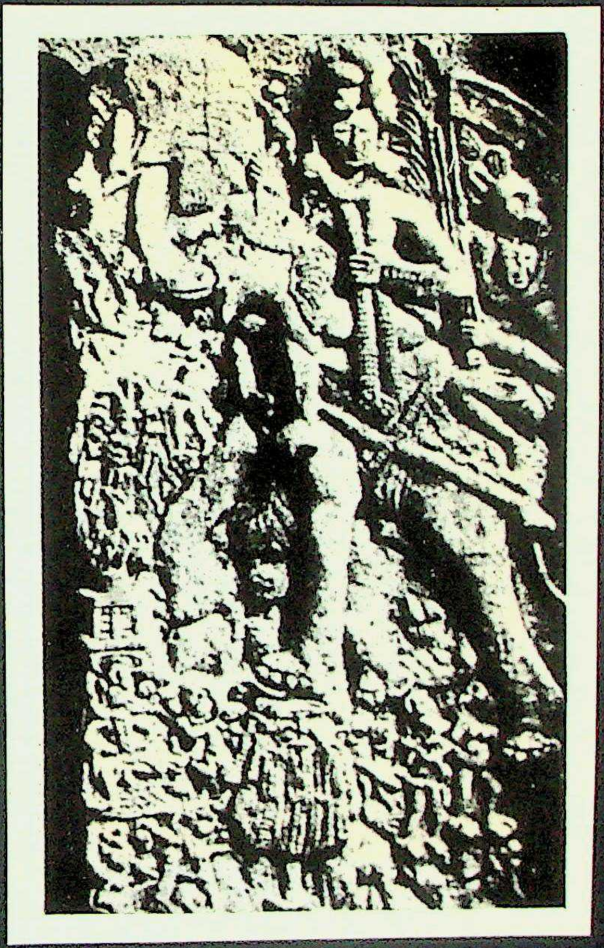

चित्रसंख्या 2, पृष्ठ ४८

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

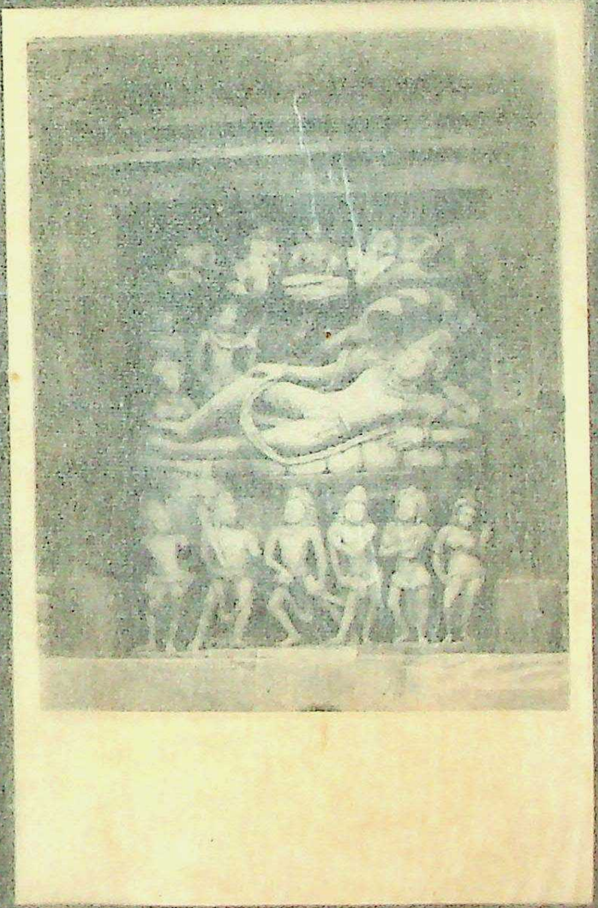

चित्रसंख्या २, पृष्ठ ५१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

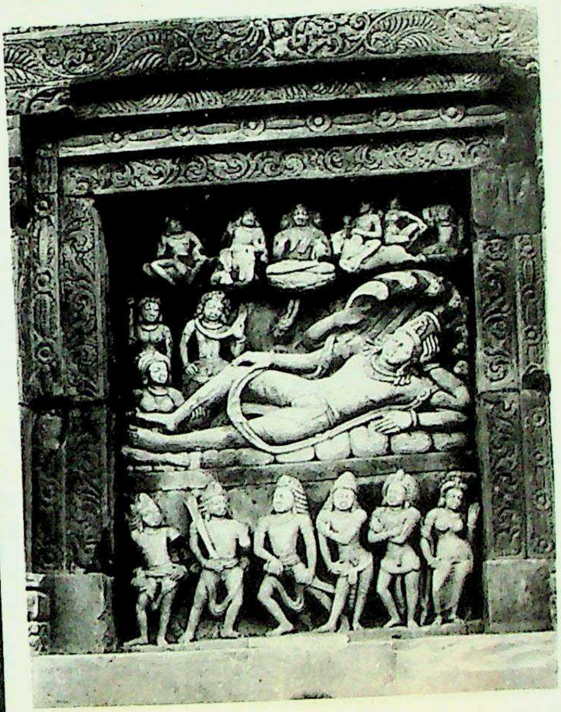

चित्रसंख्या ३, पृष्ठ ५१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

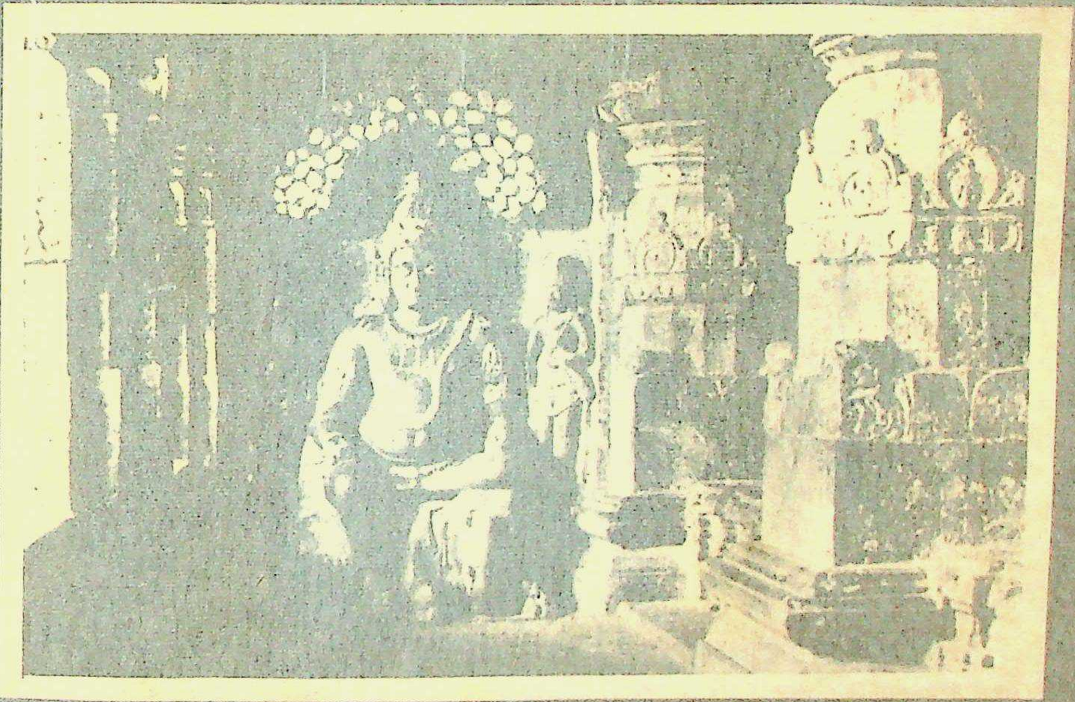

चित्रसंख्या ४, पृष्ठ ५१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चित्रसंख्या ४, पृष्ठ ५१.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चित्रसंख्या ६, पृष्ठ ८७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

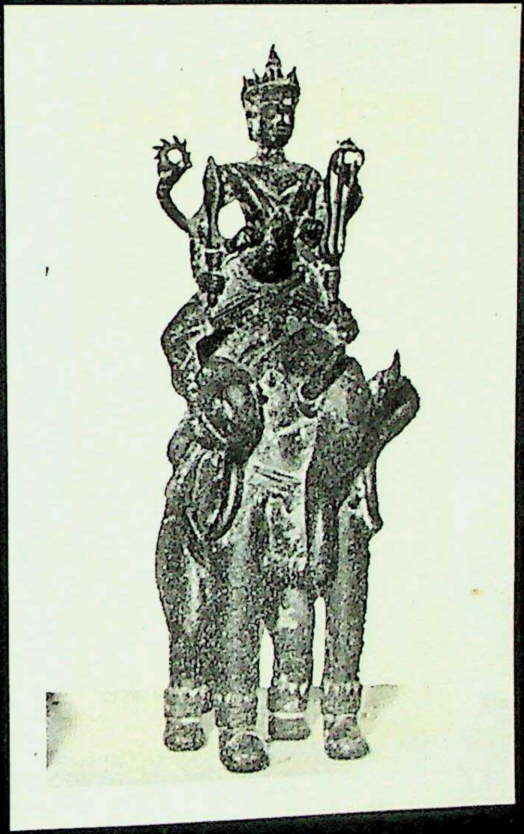

चित्रसंख्या ६९, पृष्ठ ५७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

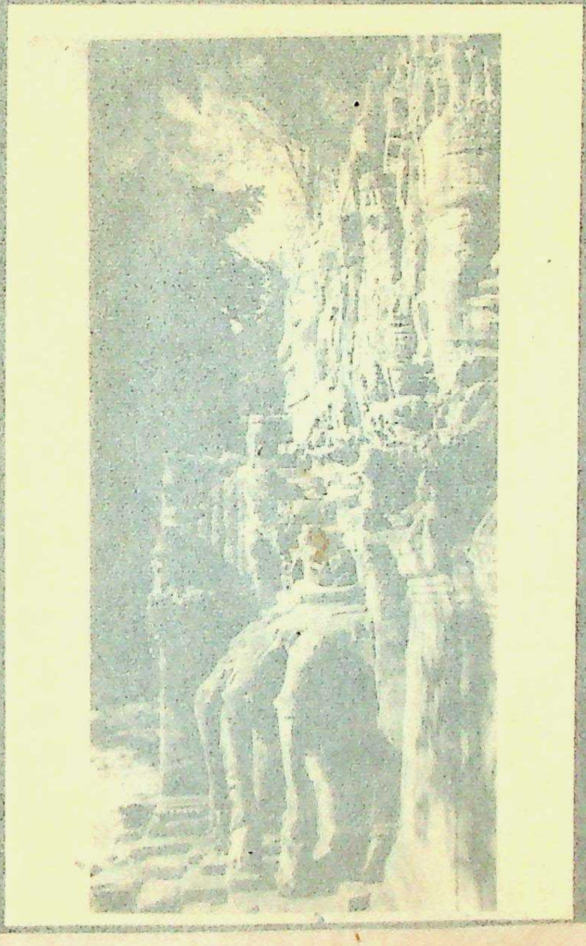

Indra[1], god of the firmament, one of the most ancient of the Indian deities and King of the Gods, had a considerable following in Cambodia, where the king reigned over men in like manner. He is also the god of the beneficent rains, which he causes to fall as he rides his many headed elephant Airavata. In fact Cambodia, like India, compares clouds to elephants disporting themselves in space. Finally Indra is the chief of the Loka-pala, the rulers of the world and of space, who appear at the cardinal points of the temples.

1. Groslier, Bernard: Angkor Art and Civilization, pl. 64.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

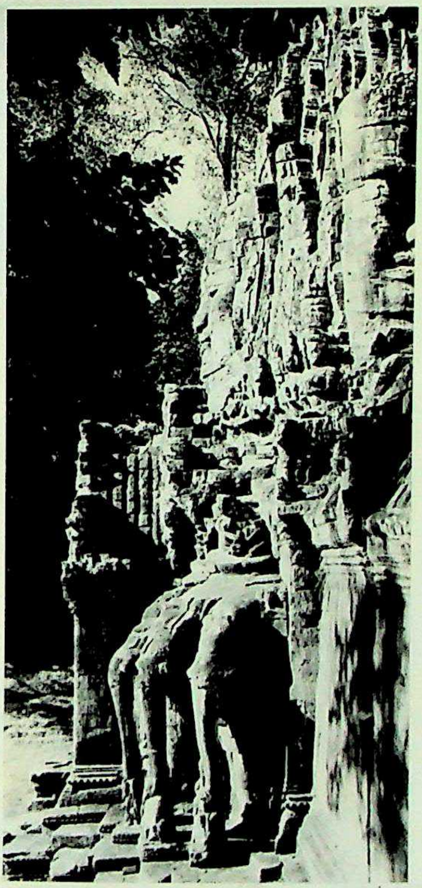

Indra[1], god of the firmament, one of the most ancient of the Indian deities and King of the Gods, had a considerable following in Cambodia, where the king reigned over men in like manner. He is also the god of the beneficent rains, which he causes to fall as he rides his many headed elephant Airāvata. In fact Cambodia, like India, compares clouds to elephants disporting themselves in space. Finally, Indra is the chief of the Loka-pāla, the rulers of the world and of space, who appear at the cardinal points of the temples.

1 Groslier, Bernard: Angkor Art and Civilization, pl. 69.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

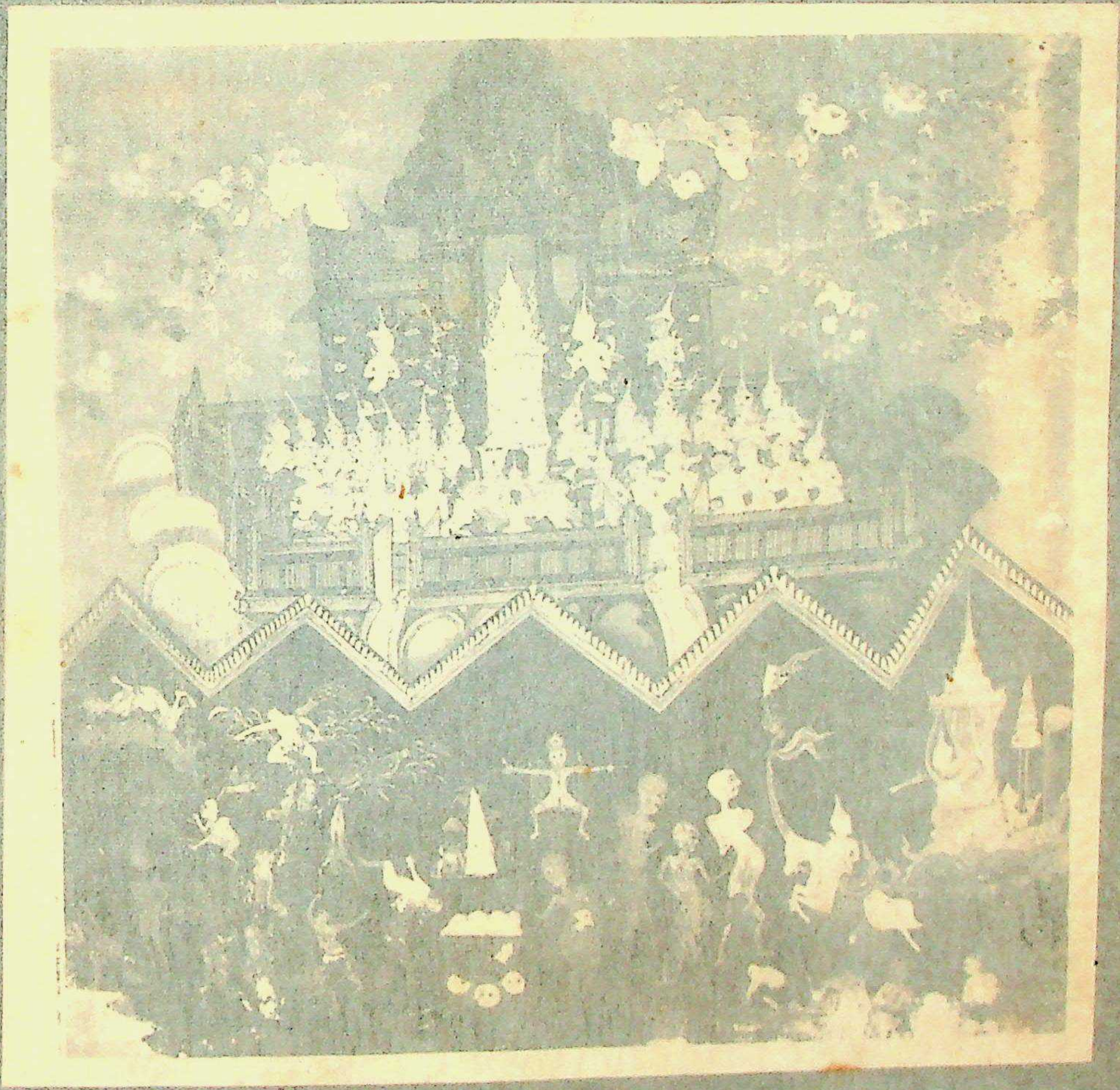

चित्रसंख्या ८, पृष्ठ ८६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चित्रसंख्या ९, पृष्ठ २७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

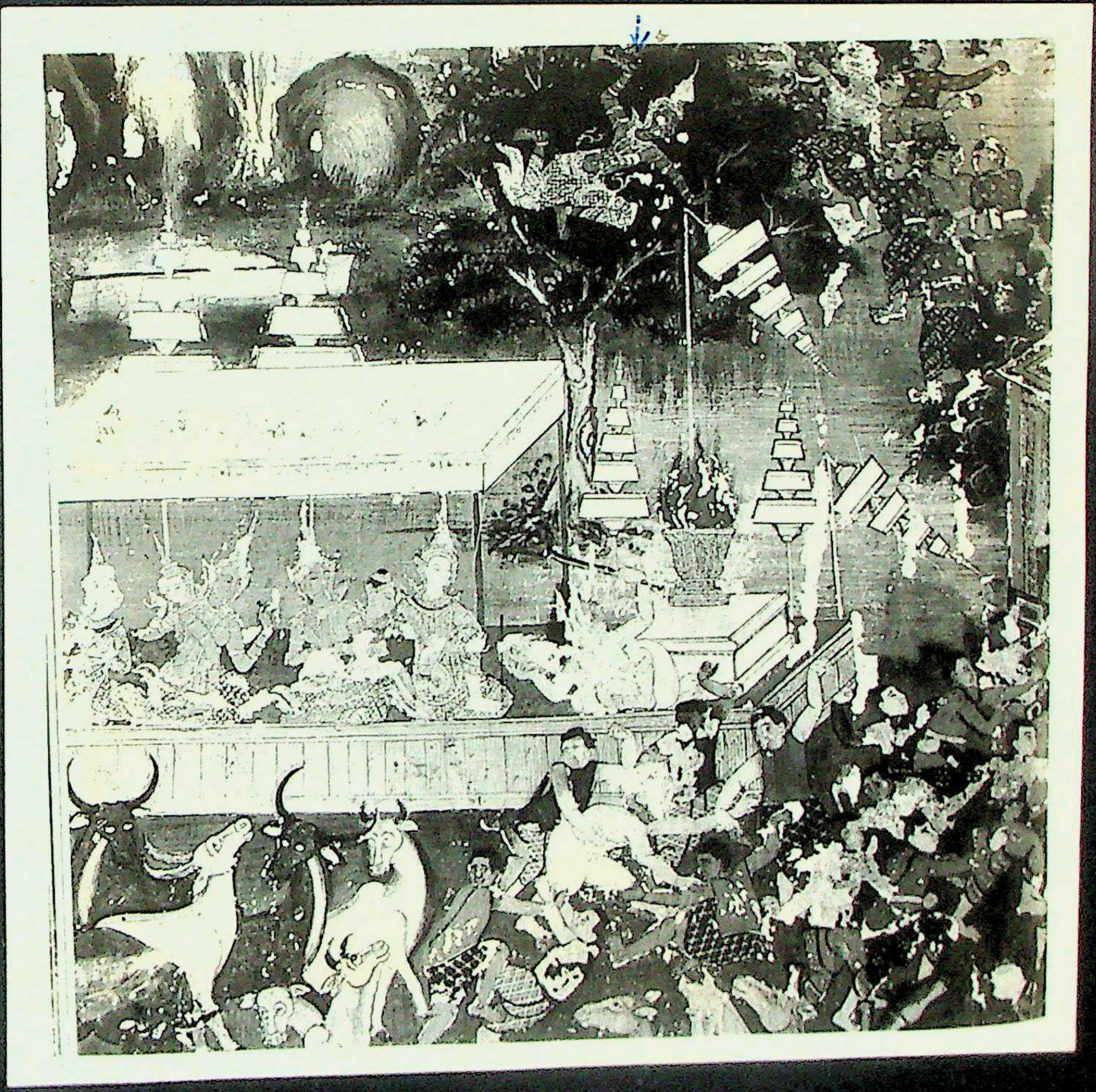

चित्रसंख्या -७, पृष्ठ ८६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

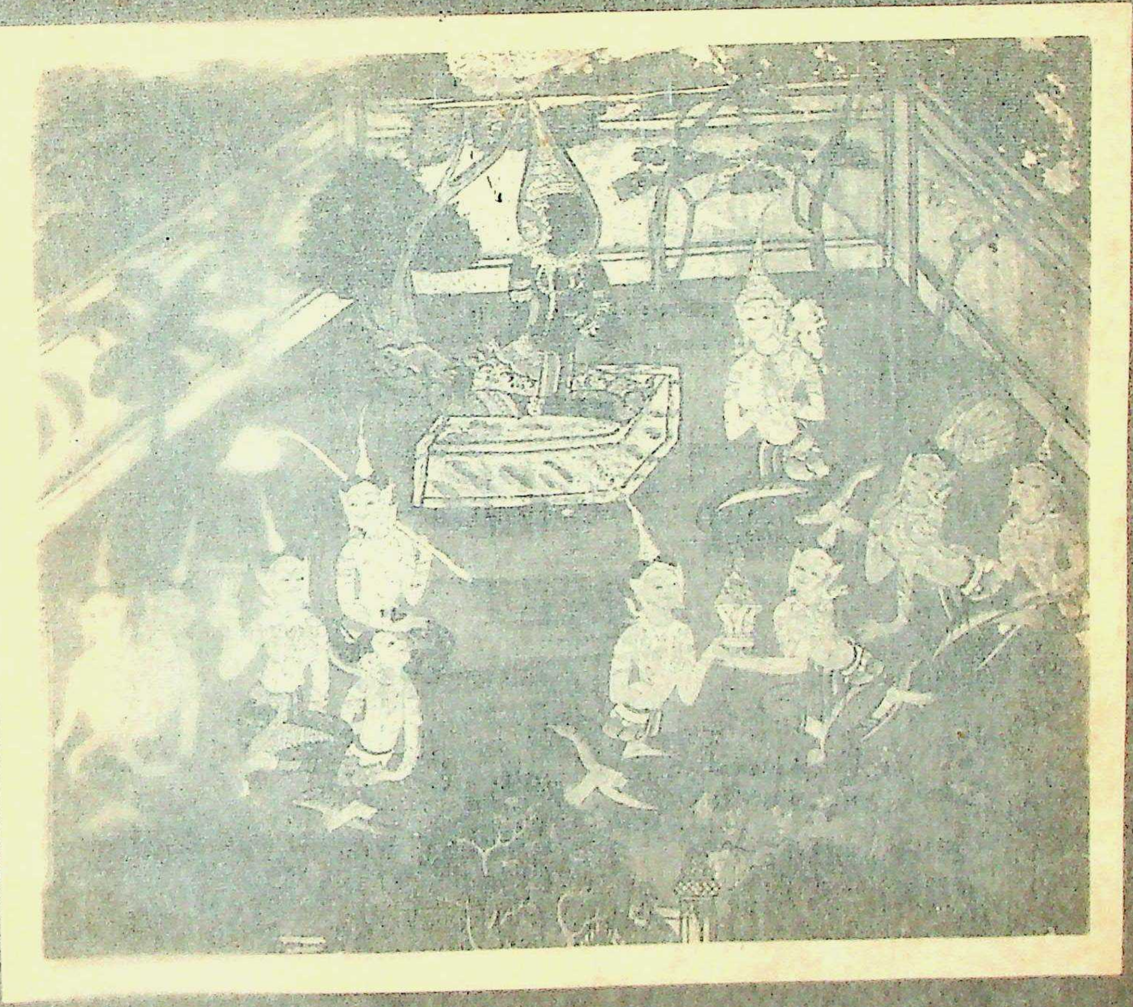

चित्रसंख्या १०, पृष्ठ ८८

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चित्रसंख्या १०, पृष्ठ ८६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

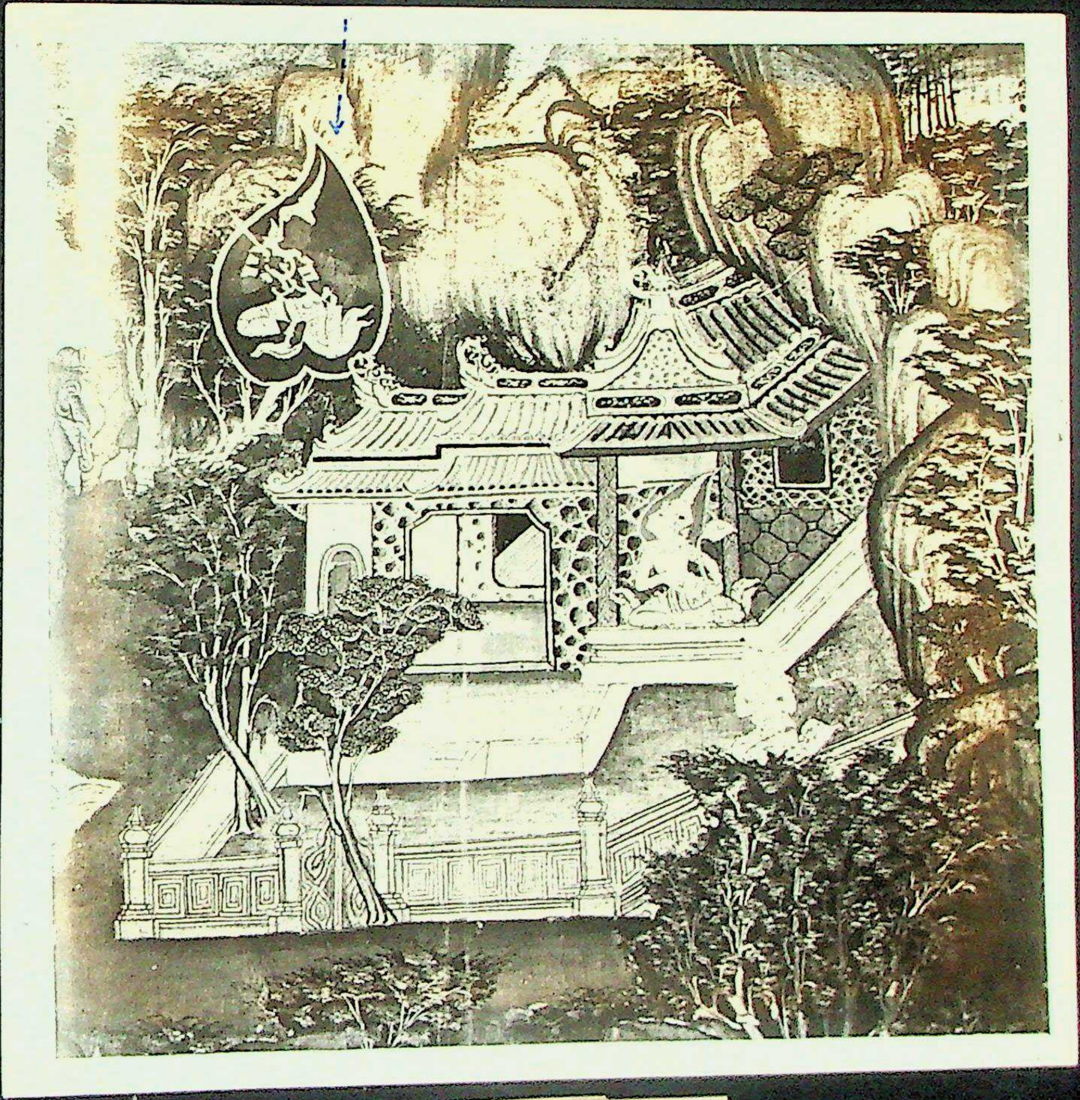

चित्रसंख्या ११, पृष्ठ ८७

जापान के १०वीं श० के तोजी मन्दिर के काष्ठ फलक पर उत्कीर्ण इन्द्र और (उनके अनुचर। सरस्वती विहार के सौजन्य से)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

State Museum Library Lucknow 7229

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh